अध्यात्म योग का मासिक पत्र

प्रेक्षाध्यान

वर्ष 38
अंक 05
जून 2017
मूल्य ₹ 30

www.preksha.com

- महामंत्र क्यों है नवकार
- प्रेक्षा है जीवन-दर्शन
- क्षांति से क्या मिलेगा?

/prekshameditation

आचार्य तुलसी
अंतर्राष्ट्रीय प्रेक्षाध्यान केन्द्र के लिए

प्रेक्षा कार्ड योजना

प्रेक्षा प्लेटिनम कार्ड (सहयोग राशि रु. 1 लाख) :

कार्ड धारक को प्रदत्त सुविधाएं–

- आचार्य तुलसी अन्तर्राष्ट्रीय प्रेक्षाध्यान केन्द्र में प्रेक्षा फाउण्डेशन द्वारा आयोजित प्रेक्षाध्यान शिविरों में प्रतिवर्ष एक साप्ताहिक शिविर में कार्ड धारक एवं उसके साथ एक अन्य व्यक्ति को 20 वर्ष तक निःशुल्क सहभागिता प्रदान की जाएगी।
- स्वतंत्र वातानुकूलित आवास सुविधा उपलब्ध कराई जायेगी।
- सात्विक एवं शुद्ध शाकाहारी भोजन उपलब्ध कराया जाएगा।
- स्वयं के न आने पर यह सुविधा कार्ड धारक अपने किसी परिजन अथवा मित्रजन को हस्तान्तरित कर सकेगा।
- प्रेक्षा फाउण्डेशन, जैन विश्व भारती द्वारा प्रकाशित मासिक पत्रिका प्रेक्षाध्यान की दस वर्षीय निःशुल्क सदस्यता।

प्रेक्षा गोल्डन कार्ड (सहयोग राशि रु. 50 हजार) :

कार्ड धारक को प्रदत्त सुविधाएं–

- आचार्य तुलसी अन्तर्राष्ट्रीय प्रेक्षाध्यान केन्द्र में फाउण्डेशन द्वारा आयोजित प्रेक्षाध्यान शिविरों में प्रतिवर्ष एक साप्ताहिक शिविर में कार्ड धारक को 20 वर्ष तक निःशुल्क सहभागिता।
- वातानुकूलित आवास सुविधा उपलब्ध कराई जायेगी।
- सात्विक एवं शुद्ध शाकाहारी भोजन उपलब्ध कराया जाएगा।
- स्वयं के न आने पर यह सुविधा कार्ड धारक अपने किसी परिजन अथवा मित्रजन को हस्तान्तरित कर सकेगा।
- प्रेक्षा फाउण्डेशन, जैन विश्व भारती द्वारा प्रकाशित मासिक पत्रिका प्रेक्षाध्यान की दस वर्षीय निःशुल्क सदस्यता।

प्रेक्षा सिल्वर कार्ड (सहयोग राशि रु. 25 हजार) :

कार्ड धारक को प्रदत्त सुविधाएं–

- आचार्य तुलसी अन्तर्राष्ट्रीय प्रेक्षाध्यान केन्द्र में फाउण्डेशन द्वारा आयोजित प्रेक्षाध्यान शिविरों में प्रतिवर्ष एक साप्ताहिक शिविर में कार्ड धारक को 20 वर्ष तक निःशुल्क सहभागिता।
- आवास सुविधा (अटैच्ड) उपलब्ध कराई जायेगी।
- सात्विक एवं शुद्ध शाकाहारी भोजन उपलब्ध कराया जाएगा।
- स्वयं के न आने पर यह सुविधा कार्ड धारक अपने किसी परिजन अथवा मित्रजन को हस्तान्तरित कर सकेगा।
- प्रेक्षा फाउण्डेशन, जैन विश्व भारती द्वारा प्रकाशित मासिक पत्रिका प्रेक्षाध्यान की दस वर्षीय निःशुल्क सदस्यता।

नोट :

- प्रेक्षा फाउण्डेशन द्वारा निर्धारित आचार संहिता धारक/शिविरार्थियों के लिए अनिवार्य रूप से पालनीय होगी।
- पुरुष एवं महिला शिविरार्थियों के लिए पृथक्-पृथक् आवास सुविधा उपलब्ध रहेगी।
- शिविर में सहभागिता हेतु दो माह पूर्व प्रेक्षा फाउण्डेशन को लिखित सूचना प्रेषित करनी होगी।
- शिविरार्थियों की निर्धारित संख्या एवं स्थान की उपलब्धता के अनुसार शिविर हेतु प्राथमिकता के आधार पर सहभागिता की स्वीकृति प्रदान की जाएगी।
- यह कार्ड/सदस्यता अहस्तान्तरणीय होगी।

प्रेक्षाध्यान

अध्यात्म योग का मासिक पत्र

Tulsi Adhyatma Needam
Jain Vishva Bharati
Publication

Prekshadhyan
A Spiritual Yoga Monthly

वर्ष 38 अंक 5 जून 2017

सम्पादक
जैन लूणकरण छाजेड़
+91 9414139192
lkchhajer3@gmail.com
editor@preksha.com

शुल्क :

प्रति अंक	:	30 रु.
पाँच वर्ष	:	1500 रु.
दस वर्ष	:	3000 रु.
एक वर्ष (विदेश)	:	2500 रु.

कार्यालय :
प्रेक्षा फाउण्डेशन
तुलसी अध्यात्म नीडम्
जैन विश्व भारती
लाडनूं-341 306
राजस्थान
भारत
दूरभाष :
+91 1581 226119
+91 82333 44482
www.preksha.com

© सर्वाधिकार सुरक्षित

वैधानिक सूचना :
प्रेक्षाध्यान मासिक में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों से सम्पादक / प्रकाशक की सहमति आवश्यक नहीं है और न उनका कोई वैधानिक उत्तरदायित्व ही है।

भीतर के पृष्ठों पर

महामंत्र क्यों है नवकार	आचार्य महाप्रज्ञ	06
प्रेक्षा है जीवन-दर्शन	आचार्य तुलसी	09
क्षांति से क्या मिलेगा ?	आचार्य महाश्रमण	11
प्रेक्षा-कैलेण्डर		13
प्रेक्षा-कथा		14
श्रमण महावीर-एक मूल्यांकन	डॉ. निजामुद्दीन	15
ध्यान-साधना की आवश्यकता	डॉ. सागरमल जैन	19
काय-सिद्धि से भाव शुद्धि	साध्वी कनकश्रीजी	20
प्रेक्षा दर्शन		23
जीवन जीने की कला	मुनि सुधाकर	24
पहल अपने आप से	साध्वी प्रमुखा कनक प्रभा	25
संचालित प्रेक्षावाहिनियों के संवाहकों की सूची		27
संभावित प्रेक्षावाहिनी संवाहकों की सूची		28
आत्मविश्वास : सफलता का आकाश	मुनि दीप कुमार	29
आगम साहित्य में ध्यान का स्वरूप	आचार्य डॉ. शिवमुनि	31
Basic Principles of Preksha Meditation	Mukhya Niyojika Sadhvi Vishrut Vibha	33
Stress And Sorrow	Acharya Mahapragya | A.P.J. Abdul Kalam	34
आचार्य महाश्रमण के उद्‌बोधन		38
जीवन उत्सव है	मुनि सुधाकर	39
प्रेक्षा गतिविधि		40-42

|| प्रेक्षा फाउण्डेशन ||

जैन विश्व भारती

प्रेक्षा कार्ड योजना

सुखी एवं शांतिपूर्ण जीवन जीने की दिशा में हमने बढाया एक कदम.....
आप भी साथी बनें और प्राप्त करें सदस्यता प्रेक्षा कार्ड की।

अधिक जानकारी के लिए Log on करें

www.preksha.com

सम्पर्क सूत्र : 09051401456, 8233344482

उतना और वही मिलेगा जितना और जो तुम्हारे भाग्य में है।
न कम मिलेगा न ज्यादा, फिर व्यर्थ चिन्ता क्यों करते हो ? - आचार्य महाश्रमण

श्रद्धावनत

रमेशचंद विजयराज राकेश बोहरा प्रदीप स्टेनलेस इंडिया प्रा. लि.

(मुसालिया-चेन्नई-दुबई)

मन के द्वारा चिकित्सा

विचार-प्रेक्षा

मन बड़ा चंचल है। यह जिस इन्द्रिय से संयुक्त होता है उसी के द्वारा बाह्य विषयों का हम ज्ञान करते हैं। किसी वस्तु को हम देख रहे हैं। वह वस्तु हमारी आंखों के सामने होती है बाहरी तंत्र या इन्द्रिय के गोलक उस विषय को मस्तिष्क के अंदर इन्द्रिय तक भेजते है और इन्द्रिय उसे मन को और मन निश्चय यात्मिका बुद्धि के पास भेजता है। तब व्यक्ति या आत्मा उसे ग्रहण करता है। यह सब कार्य क्षण भर में हो जाता है।

यह जो मन है यह भी भौतिक शरीर के अन्य यंत्रों की भांति जड़ है किन्तु इसको सूक्ष्म होने तथा आत्मा के हाथों का यंत्र होने के कारण यह चेतन-सा लगता है। मन के द्वारा आत्मा बाहरी विषयों को ग्रहण करती है। मन परिवर्तन है। इधर से उधर दौड़ता रहता है। यह कभी सभी इन्द्रियों से लगा रहता है तो कभी एक से। कभी किसी से नहीं।

पूर्णता प्राप्त मन सभी इन्द्रियों से एक साथ लगाया जा सकता है। इसमें अर्न्तदृष्टि की शक्ति है। जिसके बल से मनुष्य अपने अन्तर के सबसे गहरे प्रदेश तक में नजर डाल सकता है।

इस अर्न्तदृष्टि का विकास साधन ही "योगी" का उद्देश्य है।

योग के द्वारा योगी प्रयत्न करते हैं कि वे अपने को ऐसा सूक्ष्म अनुभूति सम्पन्न कर लें जिससे वे विभिन्न मानसिक प्रक्रियाओं को प्रत्यक्ष कर सकें।

हमारा यह मन चेतन आत्मा के साथ होने के कारण चेतन-सा प्रतीत हो रहा है। मनुष्य का असल स्वरूप है, वह मन के अतीत है। हमारा यह मन तो एक यंत्र मात्र है। मन में उसी चेतन आत्मा की चेतनता है। जब तक आत्मा एक द्रष्टा के रूप में इसके पीछे है, तभी तक यह चेतन स्वरूप है। जब मनुष्य किसी प्रकार इस मन का त्याग कर देता है तो मन फिर नहीं रहता।

इसी मन का उपादान स्वरूप है 'चित्त'।

और इस चित्त में उठने वाली तरंगे हैं, 'वृत्तियां'।

हम और आप किसी तालाब पर जायें और उसके तल को देखने का प्रयास करें।तल दिखाई क्यों नहीं देता?

कारण यह है कि जल निर्मल नहीं है और उसमें लहरें हैं, जल शान्त नहीं है।

यदि जल पूर्णरूप से साफ, निर्मल है, उसमें एक भी लहर या तरंग नहीं है, तो यह निश्चित बात है कि हम तालाब के तल को देख लेंगे।

यह चित्त ही मानों वह तालाब है और हमारा वास्तविक रूप वह तल है। ये वृत्तियां ही लहरें है। मन का अज्ञान और अपवित्रता वह गन्दलापन है।

यह सब न रहे तो अपने वास्तविक रूप को देखा जा सकता है। प्रेक्षाध्यान इन्हीं वृत्तियों या लहरों को वश में करने या रोकने का विज्ञान है।

महान योगी आचार्य महाप्रज्ञ जी कहते है कि चिकित्सा की अनेक पद्धतियां प्रचलित है। वे सब बाहर की है। एक चिकित्सा-पद्धति भीतर की है। वह है मन के द्वारा चिकित्सा। आत्मा के द्वारा चिकित्सा हो सकती है, संकल्प के द्वारा चिकित्सा हो सकती है। हम अनेक रोगों को इस चिकित्सा के माध्यम से मिटा सकते हैं। आज मनुष्य चाहता है कि सुबह बीमार हो तो शाम को स्वस्थ हो जाए। ऐसी चिकित्सा वह चाहता है। उसमें धैर्य नहीं है। वह महीनों तक दवाई लेना नहीं चाहता। मानसिक संकल्प वर्तमान में लाभ का अनुभव कराता है। जिस क्षण संकल्प बलवान होता है उसी क्षण में परिवर्तन होने लग जाता है। यह है प्राणिक प्रक्रिया, प्राण की चिकित्सा, या मन की चिकित्सा या आत्मा की चिकित्सा। क्योंकि प्राण और मन दोनों ही साथ-साथ चलते हैं। जहां प्राण जाता है वहां मन जाता है और जहां मन जाता है वहां प्राण जाता है। हम अन्तःप्रेक्षा की, अन्तर्मन की बात करते हैं। अध्यात्म का अर्थ ही है भीतर में देखना, भीतर को जानना, भीतर की यात्रा करना। भीतर देखने का या भीतर यात्रा करने का अर्थ है कि ऊर्जा बाहर की ओर प्रवाहित हो रही थी, उसे मोड़कर भीतर ले जाना। हमारे शरीर की विद्युत को समूचे शरीर में ले जाना। जहां-जहां मन गया वहां-वहां प्राण गया और जहां-जहां प्राण गया वहां-वहां ऊर्जा गयी। जहां ऊर्जा का प्रवाह होता है वहां कोई भी दोष टिक नहीं सकता, रोग रह नहीं सकता। प्राण या ऊर्जा की कमी के कारण यह उनके असंतुलन के कारण ही रोग उत्पन्न होते हैं, बीमारियां होती है। उनका संतुलन होते ही दोष नष्ट हो जाते हैं। यही मनःचिकित्सा का आधार है। मन को भीतर ले जाने का प्रयोजन ही है प्राण और ऊर्जा को भीतर प्रवाहित करना। भीतर जाने का अर्थ ही है-ऊर्जा का विकास, ऊर्जा का समूचे शरीर में इतना अवगाहन कि जहां कमी हो वह पूरी हो सके। पश्चिम में 'फीलिंग की एक चिकित्सा पद्धति प्रचलित है वह सारी-की-सारी मानसिक चिकित्सा की पद्धति और मन को नियंत्रित करने के लिए प्रेक्षाध्यान पद्धति पूर्णतया परिष्कृत बन गयी है।'

जैन लूणकरण छाजेड़

महामंत्र क्यों है नवकार

❁ आचार्य महाप्रज्ञ

हम कुछ दिनों से एक महासागर में अवगाहन कर रहे हैं, उसमें डुबकियां ले रहे हैं। यह सागर ही नहीं महासागर है। कितनी ही डुबकियां लें, कितना ही अवगाहन करें, इसका आर-पार पाना बहुत ही कठिन है। इसकी गहराई को मापना असंभव है। इसकी गहराई समूचे श्रुतसागर की गहराई हैं कहा जाता है- नमस्कार महामंत्र चौदह पूर्वों का सार है। विश्व की सारी शाब्दिक विशिष्टता, ज्ञानराशि चौदह पूर्वों में समा जाती है। इतने बड़े समुद्र का अवगाहन करना कोई बड़ी बात नहीं है। इसलिए इस महासागर को महामंत्र कहा जाता है। यह मंत्र ही नहीं महामंत्र है। यह महामंत्र क्यों है, इसे समझना है। नमस्कार मंत्र महामंत्र इसलिए है कि यह आत्मा का जागरण करता है। हमारी अध्यात्म यात्रा इससे संपन्न होती है। यह किसी कामनापूर्ति का मंत्र नहीं है। कामनापूर्ति के अनेक प्रकार के मंत्र होते हैं, जैसे- सरस्वती मंत्र, लक्ष्मी मंत्र, रोग निवारण मंत्र, सर्पदशं मुक्ति मंत्र आदि। जिस प्रकार बीमारियों के लिए औषधियों का निर्माण हुआ, वैसे ही रोग निवारण के लिए मंत्रों की संरचना हुई। जितनी बीमारियां उतनी ही औषधियां। जितने प्रकार के कामना के स्रोत हैं, उतने ही मंत्र हैं। नमस्कार महामंत्र कामनापूर्ति का मंत्र नहीं हैं इच्छा पूर्ति का मंत्र नहीं है, किन्तु यह वह मंत्र है, जो कामना को समाप्त कर सकता है, इच्छा को मिटा सकता है। बहुत बड़ा अन्तर है। एक मंत्र होता है, कामना की पूर्ति करने वाला और एक मंत्र होता है, कामना मिटाने वाला। एक मंत्र होता है, इच्छा की पूर्ति करने वाला और एक मंत्र होता है, इच्छा को मिटाने वाला। दोनों में बहुत बड़ा अन्तर है। कामनापूर्ति और इच्छापूर्ति का स्तर बहुत नीचे रह जाता है। जब मनुष्य की ऊर्ध्व चेतना जागृत होती है तब उसे यह स्पष्ट ज्ञात हो जाता है कि संसार की सबसे बड़ी उपलब्धि वही है, जिससे कामना और इच्छा का अभाव हो सके। कामना की पूर्ति और कामना का अभाव- दो बातें है। दोनों में बहुत बड़ी दूरी है।

नवकार इसलिए महामंत्र है कि

- इससे अधोमुखी बुद्धि ऊर्ध्वमुखी होती है।
- तृप्ति नहीं, इच्छा का अभाव होता है।
- सुख-दुःख की कल्पना में परिवर्तन होता है।
- मार्ग उपलब्ध होता है।
- चेतना, आनन्द और शक्ति का समन्वित विकास होता है।

मुझे एक कहानी याद आ रही है। बहुत ही मार्मिक है। एक व्यक्ति संन्यासी के पास जाकर बोला- बाबा! बहुत गरीब हूं कुछ दो।

संन्यासी ने कहा- मैं अकिंचन हूं, तुम्हें क्या दे सकता हूं?मेरे पास अब कुछ भी नहीं है।

लोग उन्हीं से मांगते हैं जिनके पास कुछ भी नहीं है। लोग उन्हीं के पीछे पड़ते है जो अकिंचन होते हैं। दुनिया की प्रकृति ही ऐसी है कि मनुष्य उनके पास नहीं जाते जिनके पास होता है, उनके पास जाते हैं जिनके पास नहीं होता।

संन्यासी ने बहुत नकारा, पर वह नहीं माना। तब बाबा ने कहा जाओ नदी के किनारे एक पारस का टुकड़ा है, उसे ले जाओ। मैंने उसे फेंका है। उस टुकड़े से लोहा सोना बनता है।

वह दौड़ा-दौड़ा नदी के किनारे गया। पारस का टुकड़ा उठा लाया। बाबा को नमस्कार कर घर की ओर चला। सौ कदम गया होगा कि मन में विकल्प उठा और वह उन्हीं पैरों संन्यासी के पास आकर बोला- बाबा! यह लो तुम्हारा पारस। मुझे नहीं चाहिए। संन्यासी ने पूछा- क्यों?यह कैसा परिवर्तन! जो धन के लिए ललचा रहा था, वह पारस जैसे महाधन को ठुकरा रहा है, धन के महास्रोत को ठुकरा रहा है। क्या हो गया दो-चार क्षणों में ही! उसने कहा- बाबा! मुझे वह चाहिए जिसे पाकर तुमने पारस को ठुकराया है। पारस से भी वह कीमती है, वह मुझे दो।

जब व्यक्ति में अन्दर की चेतना जाग जाती है तब वह कामनापूर्ति के पीछे नहीं दौड़ता, तब वह इच्छापूर्ति का प्रयत्न नहीं करता। वह उस बात के पीछे दौड़ता है, वह उस मंत्र की खोज करता है जो कामना को काट दे, उसके स्रोत को ही सुखा दे। उसे वह मंत्र चाहिए जो इच्छा का अभाव पैदा कर दे, इच्छा के स्रोत को नष्ट कर दे। नमस्कार महामंत्र इसीलिए है कि उससे इच्छा की पूर्ति नहीं होती, किन्तु इच्छा का स्रोत ही सूख जाता है। जहां सारी इच्छाएं समाप्त, सारी कामनाएं समाप्त, जहां व्यक्ति निरीह और निष्काम बन जाता है और कामना के धरातल से ऊपर उठ जाता है, वहां उसका अर्हत् स्वरूप जागता है। यही नमस्कार महामंत्र का प्रयोजन है और इसीलिए यह केवल मंत्र ही नहीं महामंत्र है।

नमस्कार महामंत्र से भी ऐहिक कामनाएं पूरी होती हैं, किन्तु यह उसका मूल उद्देश्य नहीं है, मूल प्रयोजन नहीं है। उसकी संरचना केवल अध्यात्म जागरण के लिए हुई है, कामनाओं की समाप्ति के लिए हुई है। यह एक तथ्य है कि जहां बड़ी उपलब्धि होती है, वहां आनुषंगिक रूप में अनेक छोटी उपलब्धियां भी अपने आप हो जाती है। छोटी उपलब्धि में बड़ी उपलब्धि नहीं होती, किन्तु बड़ी उपलब्धि में छोटी उपलब्धि सहज हो जाती है। कोई व्यक्ति सरस्वती के मंत्र की आराधना करता है तो उसके ज्ञान बढ़ेगा। कोई व्यक्ति लक्ष्मी के मंत्र की आराधना करता है तो उसके धन बढ़ेगा। किन्तु अध्यात्म का जागरण या आत्मा का उन्नयन नहीं होगा, क्योंकि छोटी उपलब्धि के साथ बड़ी उपलब्धि नहीं मिलती। जो व्यक्ति बड़ी उपलब्धि के लिए चलता है, रास्ते में उसे छोटी-छोटी अनेक उपलब्धियां प्राप्त हो जाती हैं।

राजा के चार रानियां थी। राजा विदेश गया हुआ था। जब उसके लौटने का समय हुआ तब रानियों ने विदेश से कुछ वस्तुएं मंगाई। एक रानी ने हार, दूसरी ने कंगन, तीसरी ने नूपुर मंगाया। पत्र लिख दिए। चौथी ने अपने पत्र में लिखा- मुझे आपके सिवाय कुछ नहीं चाहिए। राजा आया। तीनों रानियों को अपनी-अपनी वस्तुएं दी और चौथी रानी को सब कुछ दे दिया। उसने कहा- किसी को हार की, किसी को कंगन की और किसी को नूपुर की जरूरत थी। मैंने उनकी जरूरत पूरी कर दी। चौथी रानी को मेरी जरूरत थी। उसे मैं मिल गया। साथ-साथ मेरा जो कुछ है वह सब उसे सहज मिल गया है।

व्यक्ति बहुत छोटी-छोटी मांगें करता है। उसे छोटा मिलता है। किन्तु जब मांग बहुत बड़ी होती है तो छोटी मांगें स्वयं मिल जाती हैं।

यह नमस्कार मंत्र महामंत्र इसलिए है कि इसके साथ कोई मांग जुड़ी हुई नहीं हैं उसके पीछे कोई कामना नहीं है। इसके साथ केवल जुड़ा हुआ है- आत्मा का जागरण, चैतन्य का जागरण, आत्मा के स्वरूप का उद्घाटन और आत्मा के आवरणों का विलय। जब इतनी बड़ी मांग होती है, जब आत्म साक्षात्कार और परमात्मा बनने की मांग पूरी होती है तब सहवर्ती अनेक उपलब्धियां स्वयं आ जाती हैं। जिस व्यक्ति को परमात्मा उपलब्ध हो गया, जिस व्यक्ति को आत्म-जागरण उपलब्ध हो गया, उसे सब कुछ उपलब्ध हो गया। कुछ भी शेष नहीं रहा।

नमस्कार महामंत्र के साथ कोई छोटी मांग जुड़ी हुई नहीं है, उसके साथ जुड़ा हुआ है केवल चैतन्य का जागरण। सोया हुआ चैतन्य जाग जाए। सोया हुआ प्रभु, जो अपने भीतर है, वह जाग जाए। अपना परमात्मा जाग जाएं जहां इतनी बड़ी स्थिति होती है वहां सचमुच वह मंत्र महामंत्र बन जाता है।

नमस्कार महामंत्र के पांचों पदों में पांच आत्माएं जुड़ी हुई हैं कोई अल्प शक्ति जुड़ी हुई नहीं है। विश्व की पांच महाशक्तियां इसके साथ जुड़ी परमात्मा है, सिद्ध परमात्मा है। आचार की गंगा में अवगाहन करने वाले और ऐसे नंदनवन में रहने वाले जिनके आसपास सौरभ फूटता है, वे परम आत्मा का जागरण करने वाले आचार्य इसके साथ जुड़े हुए हैं। वे उपाध्याय इसके साथ जुड़े हुए हैं जो समग्र श्रुतराशि का अवगाहन कर ज्ञान का आलोक विकीर्ण करते हैं। इसके साथ जुड़े हुए है वे साधु या साधक जो आत्मा के समस्त आवरणों को दूर कर, परमात्मा से साक्षात्कार करने का सतत उपक्रम कर रहे हैं। विश्व की सारी पवित्र आत्माएं किसी संप्रदाय की नहीं, किसी धर्म विशेष की नहीं, किसी जाति की नहीं, सबकी हैं, वे सब इसके साथ जुड़ी हुई हैं।

नमस्कार के महामंत्र होने का दूसरा हेतु यह है कि यह एक मार्ग है।

णमो अरहंताणं- अर्हत् मार्ग होता है।

मैं दूसरा प्रयोग करवाना चाहता हूं कि अर्हत् का ध्यान पैरों पर क्यों किया जाए?लोगों को लगेगा कि अर्हत् का स्थान तो सिर है, पैरों पर उनका ध्यान क्यों?यह प्रश्न है। इसका मुझे ज्ञान था। मेरे पास इसका समाधान भी है। मैंने योग साधना से जो कुछ अनुभव किया, आज के वैज्ञानिक अनुसंधानों को पढ़ा-सुना। एक्यूपंक्चर चिकित्सा पद्धति में खोजे गये सात सौ चैतन्य केन्द्रों के विषय में पढ़ा, योग तथा आचार्यों द्वारा निर्दिष्ट चैतन्य केन्द्रों का अनुभव किया और आज के शरीरशास्त्रियों द्वारा खोजे गए ग्रन्थियों का सिद्धान्त और स्वरूप देखा तो ज्ञान हुआ कि शरीर का कण-कण पवित्र है। पैर का अंगूठा भी उतना ही पवित्र है जितना पवित्र शरीर का शिखर है। कोई अन्तर नहीं है। जब हम कहते हैं- हिमालय बहुत बड़ा है तो उसकी तलहटी भी बड़ी है और शिखर भी बड़ा है। गंगा यदि पवित्र है तो उसका प्रत्येक कण पवित्र हैं उसकी प्रत्येक बूंद पवित्र है। उसकी प्रत्येक धारा पवित्र है। गंगा यदि पवित्र है तो जहां से वह उत्पन्न होती है वह भी पवित्र है और जहां प्रवाहित होती है वह भी पवित्र हैं हमारे शरीर का कण-कण पवित्र है। सिर का कोई भाग अपवित्र नहीं है। सारा पवित्र है। हमारे सिर में यदि चैतन्य केन्द्र हैं, हमारे शरीर में पिच्यूटरी और पिनियल ग्लैण्ड्स हैं तो हमारे हाथों-पैरों में भी वैसा ही है। जो ग्रन्थियां सिर में हैं वे हाथों- पैरों में भी हैं पैरों में अनेक चैतन्य केन्द्र हैं। प्राचीनकाल में यह प्रचलित था कि यदि ध्यानस्थ व्यक्ति को जगाना है तो उसके पैर के अंगूठे को बीच से दबाना होता। वह समाधिस्थ व्यक्ति जाग जाता है। उसकी समाधि टूट जाती है। यह उल्लेख प्राचीन ग्रन्थों में प्राप्त है। इसका रहस्य ज्ञान नहीं हो रहा था। किन्तु एक्यूपंक्चर पद्धति के अध्ययन से यह रहस्य स्पष्ट हो गया। पिच्यूटरी का जो सेंटर है, उस जैसा केन्द्र भी अंगूठे में है। यह रहस्य बहुत लाभदायी हुआ।

जब ध्यान की गहराई होती है, व्यक्ति दर्शन केन्द्र की गहराइयों में चला जाता है और समाधिस्थ हो जाता है। दर्शनकेन्द्र समाधि का बहुत बड़ा केन्द्र है। इसकी अवस्थिति भृकुटियों के बीच है। जो व्यक्ति इस केन्द्र में समाधिस्थ हो जाता है उसके जागरण का उपाय यह है कि उसके पैर के अंगूठे को दबाना। वह दबाव दर्शनकेन्द्र तक पहुंच जाएगा और उस व्यक्ति की समाधि टूट जाएगी। हमारे पैर भी उतने ही पवित्र हैं जितना पवित्र है हमारा सिर। हम पैरों को अपवित्र क्यों मानें?हमारी गति का माध्यम क्या हैं?गति का एकमात्र माध्यम है पैरों के पंजे। यदि पंजे नहीं टिकते हैं तो गति नहीं हो सकती। अर्हत् की आराधना पैरों पर भी की जाती है। जिस प्रकार पैर गति देने वाले हैं उसी प्रकार अर्हत समूची अध्यात्मयात्रा को गति देने वाले हैं। अर्हत् मार्ग हैं। अर्हत् पैर हैं। अर्हत् गति हैं और गति को बढ़ाने वाले हैं।

नमस्कार महामंत्र में समूचा मार्ग समाया हुआ है। मोक्ष मार्ग के चार चरण हैं- सम्यग् ज्ञान, सम्यग् दर्शन, सम्यग् चारित्र और सम्यग् तप। अर्हत् इस चतुष्टयी के समन्वित रूप हैं। वे मार्ग हैं। अर्हत् का स्वरूप है- अनन्त ज्ञान, अनन्तदर्शन, अनन्त चारित्र अर्थात् अनन्त आनन्द और अनन्तशक्ति। चारित्र और आनन्द एक हैं। साधना-काल में जो चारित्र होता है वह सिद्धि-काल में आनन्द बन जाता है। दोनों में कोई अन्तर नहीं है। यही है अर्हत् का स्वरूप और यही है मोक्ष का मार्ग। नमस्कार महामंत्र में मार्ग का रहस्य छिपा हुआ है। हमारी अध्यात्म-यात्रा का समूचा मार्ग छिपा हुआ हैं यह मंत्र मार्गदाता है, इसलिए यह महामंत्र की कोटि में आता है।

नमस्कार मंत्र का महामंत्र होने का तीसरा हेतु है- दुःखमुक्ति का सामर्थ्य। आदमी का सारा पुरुषार्थ दुःख को मिटाने और सुख को पाने के लिए होता है। जितना पुरुषार्थ, जितनी प्रवृत्ति, जितनी चेष्टा और जितनी सक्रियता है, वह दो बातों से जुड़ी हुई है। पहली बात है दुःख को मिटाना और दूसरी बात है सुख प्राप्त करना।

कल-कारखाने चलाने वाले से पूछा जाता है कि इतना श्रम क्यों?वह कहता है- दुःख कट जाए। अपना दुःख भी कटे और दुनिया का दुःख भी कटे। कृषक को पूछा जाता है- खेती क्यों करते हो?वह कहता है- भूख का दुःख मिटे। लोगों को अनाज मिले। उनका भी दुःख कट जाए। प्रत्येक प्रवृत्ति के पीछे ये दो हेतु होते हैं। -दुःख का उच्छेद और सुख की उपलब्धि, दुःख-सुख की सारी कल्पना को ही बदल देता है। जब हम इस महामंत्र के परिपार्श्व में जाते हैं, तब मन-स्थिति कुछ और ही होती है। सारा दर्शन बदल जाता है, सारी अवधारणा बदल जाती हैं ऐसा लगने लगता है कि जिसको हमने सुख मान रखा था, जिसको हमने दुःख मान रखा था, वह सुख न सुख है और वह दुःख न दुःख है। सुख-दुःख की भ्रान्ति मिट जाती है, नींद टूट

जाती है और आदमी जाग जाता है। स्वप्न समाप्त हो जाता है। स्वप्न का दर्शन जागने पर बदल जाता है। जागने वाला व्यक्ति स्वप्न की अवधारणा को यथार्थ नहीं मानता। स्वप्न की अवधारणा जागने की अवधारणा से भिन्न होती है। सुख-दुःख की कल्पना में परिवर्तन हो जाता है।

खुजलाने को कष्टप्रद माना जाता है। खुजलाना कितना आनन्द देने वाला है, यह उस व्यक्ति से पूछें जो खुजली के रोग से पीड़ित है। बुद्धि का विपर्यय, मति का विपर्यय और चिंतन का इतना विपर्यय हो जाता है कि व्यक्ति जो नहीं है उसे मान लेता है, जो है उसे नहीं मानता। ठीक है, आदमी ने पदार्थ में सुख मान रखा है। खाने में सुख होता है, पीने में सुख होता है, वस्तुओं के भोग में सुख होता है। भूख लगी है और यदि खाना नहीं मिलता है तो दुःख होता है। प्यास लगी है और यदि पानी नहीं मिलता है तो दुःख होता है। जो चाहिए वह नहीं मिलता है तो दुःख होता है। मलेरिया ज्वर में कुनैन नहीं मिलता है तो दुःख होता है। क्या कुनैन की गोलियां खाना सुख है?कोई सुख नहीं है। हम गहरे में उतर कर देखें। ज्ञात होगा कि भूख स्वयं एक बीमारी है। संस्कृत में इसका नाम है- जठराग्निजा पीड़ा, जठर की अग्नि से होने वाली पीड़ा। भला बीमारी भी कभी सुख होती है?तो क्या बीमारी के लिए कोई दवा लेना सुख की बात है?खाने का अर्थ है उस जठर की अग्नि से उत्पन्न पीड़ा को बुझाना। खाना भी बीमारी है। हमारी मान्यता ऐसी हो गई है कि यदा-कदा होने वाली पीड़ा को हम बीमारी मान लेते हैं और रोज होने वाली पीड़ा को बीमारी नहीं मानते सुख मानते हैं। भूख बीमारी है और खाना भी बीमारी है।

एक बात है। बुरी चीज छूटने पर आदमी को सुख ही होता है, ऐसा नहीं है। बुरी चीज छूटने पर आदमी को दुःख भी होता है। पेट में मल संचित है। मल विजातीय द्रव्य है। जब वह निकाला जाता है तो एक बार आदमी कमजोरी और थकान का अनुभव करता है। खराबी का निष्कासन हो रहा है, पर आदमी कमजोर होता जा रहा है। इसका कारण स्पष्ट है। जिसको वर्षों से पाल रखा है, उससे छुटकारा पाना कोई नहीं चाहता। संस्कृत में एक नीतिवाक्य है- विषवृक्षोऽपि संवर्ध्य स्वयं छेत्तुं न साम्प्रतम्- अपने हाथों से बढ़े हुए विष- वृक्ष को काटना उचित नहीं है। यह नीतिसूत्र इसीलिए चला होगा। आदमी दुःख के वृक्ष को पालता चला जा रहा हैं उसे उखाड़ फेंकने की बात वह सोचता ही नहीं। कितना विपर्यय! कितना आश्चर्य! हम बीमारी की दवा लेते हैं और उसे सुख मान लेते हैं। किन्तु यथार्थ में सुख की चेतना तब जागती है जब आदमी नमस्कार मंत्र की आराधना में लगता है। वह बाहर की यात्रा से विरत होकर अन्तर की यात्रा प्रारम्भ करता है तब सुख की चेतना जागृत होती है। इस जागरण में नए-नए अनुभव होने लगते हैं जो पहले कभी नहीं हुए थे। उस समय अलौकिक आनन्द का अनुभव होता है। उसे लोकोत्तर सुख की अनुभूति होती है जो पदार्थ से कभी नहीं हो सकती।

जब हम नमस्कार महामंत्र की आराधना करते समय अन्तःकरण की गहराइयों में उतरते हैं और उसको साक्षात् करते हैं तब अलौकिक आनंद की रश्मि फूट पड़ती है, सारा मार्ग आलोक से भर जाता है और तब सुख-दुःख की सारी धारणा बदल जाती है। मनुष्य सदा यह मानता रहा है कि पदार्थ से ही इन्द्रियों को और मन को सुख मिलता है। यह भ्रान्ति टूट जाती है। यह मूर्च्छा समाप्त हो जाती है। उसे भान हो जाता है कि पदार्थ से ही सुख नहीं मिलता, अपने अन्तःकरण से भी सुख मिलता है। पदार्थ से मिलने वाला कोई भी सुख ऐसा नहीं है जिसके साथ दुःख जुड़ा हुआ न हो। किन्तु इस आत्मानुभव के साथ, आत्मा से फूटने वाली सुख-रश्मियों के साथ कोई दुःख जुड़ा हुआ नहीं हैं यह केवल सुख है, विशुद्ध और परिपूर्ण सुख हैं इसमें कोई मिश्रण नहीं है।

आप अनुभव करें कि जब उत्तेजना आती है तब गाली देने में कितना आनन्द आता है। ऐसा लगता है मानो स्वर्ग का राज्य ही लूट लिया गाली देकर। किन्तु जब उत्तेजना का पारा उतरता है तब मन पश्चात्ताप से भर जाता है, ग्लानि से भर जाता है। इन्द्रिय-संवेदनाओं से होने वाली घटनाओं के प्रति प्रारंभ में हमारा मोह होता है और हम उन्हें कर डालते हैं। उनके घटित होने पर मन में पछतावा होता है और प्रत्येक व्यक्ति यह सोचता है कि ऐसा नहीं करता तो अच्छा होता। करते समय सुख अनुभव होता है और करने के बाद दुःख होता है! यह ऐसा सुख है जिसके साथ अनुताप जुड़ा हुआ है। पुद्गल से प्राप्त होने वाला ऐसा एक भी सुख नहीं है जिसके साथ दुःख की परम्परा जुड़ी हुई न हो, सन्ताप की परम्परा संलग्न न हो।

ध्यान करने वाले किसी भी व्यक्ति ने यह नहीं कहा कि अच्छा होता यदि मैं ध्यान नहीं करता। इसका कारण है कि जो सुखानुभूति ध्यान से प्रसूत होती है, वह आनन्द देती है। ध्यान अध्यात्म की यात्रा है। इसमें दूसरे की कसौटी, दूसरे का मानदंड और दूसरे का तराजू काम नहीं देता। अपनी कसौटी, अपना मानदंड और अपनी तुला ही इसमें काम देती है। जहां अपना अनुभव जाग जाता है, अपनी चेतना जाग जाती है वहा व्यक्ति स्वयं में कसौटी होता है, स्वयं में तुला होता है। यह स्थिति प्राप्त होते ही पुरानी धारणाएं बदल जाती है। सारे मानदंड बदल जाते हैं। तब व्यक्ति अपने आपको खाली करने में लग जाता है। खाली होने की यह अवस्था ही निर्विकल्प अवस्था है। जब हम मंत्र की साधना के द्वारा शब्द के सहारे विकल्प से चलते-चलते निर्विकल्प स्थिति तक पहुंचते हैं, उस समय चैतन्य का नया उन्मेष जागता है। इसीलिए नमस्कार मंत्र महामंत्र है।

नमस्कार मंत्र के महामंत्र होने का चौथा हेतु है- इसमें वृत्तियों का ऊर्ध्वीकरण, बुद्धि का ऊर्ध्वारोहण होता है। हमारी शरीर-रचना में जो बुद्धि का स्थान है, वृत्तियों का स्थान है, उनके केन्द्र हैं, वे सारे नीचे की ओर मुंह किए हुए हैं। वृत्तियां नीचे की ओर, बुद्धि नीचे की ओर, इसीलिए आदमी का चिंतन नीचे की ओर जाता है। नीचे हमारा कामना-केन्द्र है, हमारी सारी बुद्धि काम-केन्द्र की ओर जाती है। हमारी चेतना का पूरा प्रवाह नीचे की ओर जाता है। जब हम नमस्कार महामंत्र की आराधना करते हैं और शक्ति केन्द्र से प्रारम्भ कर, सुषुम्ना के मार्ग से ज्ञान केन्द्र तक श्वास को ले जाते हैं तो इसका अर्थ है कि हम नीचे से ऊपर आरोहण कर रहे हैं। तलहटी से शिखर की ओर चढ़ रहे हैं। उस स्थिति में वृत्तियों का मुंह बदल जाता है। वे ऊर्ध्वमुखी हो जाती हैं। बुद्धि जो नीचे की ओर मुंह कर लटक रही थी, वह भी ऊपर की ओर मुंह कर लेती है। हमारी सारी वासनाएं बुद्धि और वृत्तियों के औंधे मुंह का सहारा पाकर पनप रही थीं। जब बुद्धि का मुंह बदल गया, वृत्तियों का मुंह बदल गया, तब बेचारी कामनाएं, वासनाएं सूखने लग जाती हैं और चेतना का ऊर्ध्वारोहण प्रारम्भ हो जाता है।

नमस्कार मंत्र का महामंत्र होने का हेतु है- वृत्तियों का ऊर्ध्वीकरण, बुद्धि का ऊर्ध्वीकरण। मंत्र का एक-एक शब्द आत्मा-भावना का ऊर्ध्वीकरण करता है।

मैंने चार हेतु प्रस्तुत किए। इनके परिप्रेक्ष्य में कहा जा सकता है कि यह नमस्कार मंत्र यथार्थ में महामंत्र है।

प्रेक्षा है जीवन-दर्शन

❁ आचार्य तुलसी

जन्म और जीवन ये दो बिंदु है। जन्म एक स्वाभाविक क्रिया है। जीवन में विवेक का योग हो सकता है। जन्म प्राणी की नियति है। जीवन के पीछे कुछ प्रेरणाएं रहती हैं। जीवन जीना एक बात है और जीवन को दर्शन बनाना दूसरी बात है। जीते सब हैं, पर जीवन को दर्शन बनाना हर एक के वश की बात नहीं है। यों भी माना जा सकता है कि सबका जीवन दर्शन नहीं बन सकता। जीवन दर्शन के बारे में विचार करते समय कुछ प्रश्न सहज रूप में आविर्भूत हो जाते हैं-

- जीवन क्या है?
- जीवन क्यों है?
- जीवन का लक्ष्य क्या होना चाहिए?
- जीवन कैसे जीना चाहिए?
- जीवन कहीं समाप्त होता है या चलता रहता है?
- किसका जीवन बनता है दर्शन?

जीवन क्या है?

सबसे पहला प्रश्न है-जीवन क्या है? एक अभिमत के अनुसार पांच भूतों की समन्विति का नाम जीवन है। पांच भूत मिलते हैं, यह जीवन है और पांचों भूतों का बिखराव मौत है। यह शरीर जीवन का आधार है। इसमें किसी चेतना नामक तत्त्व को स्वीकृति नहीं मिलती, क्योंकि वह आंखों का विषय नहीं है।

जैन दर्शन के आधार पर जीवन को परिभाषित किया जाए तो उसका स्वरूप इस प्रकार बनता है- शरीर इंद्रियां, प्राण, मन, भाव, चित्त और चेतना की युति जीवन है। इसमें जड़ और चेतना दोनों के योग को स्वीकार किया गया है। आत्मा का अस्तित्व त्रैकालिक है। उसका शरीर के साथ प्रगाढ़ संबंध है। अनादिकाल से वह कर्मशरीर से संपृक्त है। जब तक यह संयोग रहेगा, आत्मा का शुद्ध स्वरूप प्रकट नहीं हो सकता। साधारण आदमी आत्मा के अस्तित्व को पहचानता है तो उसका आधार शरीर, इंद्रियां आदि दृश्य तत्त्व ही हैं।

जीवन क्यों है?

दूसरा प्रश्न है-जीवन क्यों है?जिसका जन्म होता है, उसे जीना भी होता है। इसका संबंध जीवनी शक्ति या आयुष्य प्राण के साथ है। जब तक आयुष्य-बल प्राण क्षीण नहीं होता, कोई किसी को मार नहीं सकता। एक व्यक्ति अचानक मर जाता है। एक व्यक्ति भयंकर दुर्घटना का शिकार होकर भी बच जाता है। कुछ लोग इसमें ईश्वर का कर्तृत्व मानते हैं। यदि ईश्वर बचाने वाला होगा तो किसी को क्यों मरने देगा?समाज या राष्ट्र को जिन विशिष्ट व्यक्तियों की जरूरत होती है, उनको बचाने में ईश्वर कोताही क्यों करेगा?इस प्रकार के और भी अनेक तथ्य हैं जो किसी ईश्वरीय शक्ति के हस्तक्षेप पर प्रश्न चिह्न अंकित कर देते हैं।

एक भव से दूसरे भव में जन्म के समय सबसे पहले जो आहार लिया जाता है, उसे ओज आहार कहते हैं। आयुष्य-बल प्राण के साथ इसी का संबंध है। जब तक ओज आहार रहता है, जब तक आयुष्य- बल प्राण है, तब तक जीवन है। आयुष्य पूरा होने के बाद कोई प्राणी जीवित नहीं रह पाता।

जीवन का लक्ष्य-

लक्ष्य का जहां तक प्रश्न है, एक इंद्रिय से चार इंद्रिय वाले जीवों के जीवन का कोई लक्ष्य नहीं होता, क्योंकि लक्ष्य-निर्धारण कर सके, ऐसी विकसित चेतना उन जीवों के पास नहीं हैं पांच इंद्रिय वाले जीवों में नैरयिक, तिर्यंच और देवों के सामने भी कोई बड़ा लक्ष्य नहीं होता। एक मनुष्य ही ऐसा प्राणी है जो बुद्धिबल और विवेक के सहारे लक्ष्य का निर्धारण करता है। स्थावर और विकलेंद्रिय जीव अमनस्क होते हैं। वे कुछ भी सोच नहीं सकते। पशु-पक्षी कुछ अंशों में सोचते-समझते हैं, पर विवेक जागृति के अभाव में वे कोई गहरी बात नहीं सोच पाते। नैरयिक जीव इतना कष्ट भोगते हैं कि उनकी चेतना मूर्च्छित-सी हो जाती है। देवों का जहां तक प्रश्न है, वे विलासी होते हैं। भौतिक-सुखों की आसक्ति उनको किसी उदात्त लक्ष्य से जोड़ ही नहीं पाती।

मनुष्य का मस्तिष्क बहुत विकसित है। संसार में जितने नए आविष्कार हुए हैं या हो रहे हैं, सब मनुष्य की देन है। देवों का जीवन स्तर उन्नत है, फिर भी नए विकास की दृष्टि से उनके कर्तृत्व पर प्रश्न चिह्न लगा हुआ है। मनुष्य होकर भी जो निषेधात्मक भावों में जीते हैं, अमीरी या गरीबी के अभिशाप से संत्रस्त हैं, वे कोई बड़ा काम नहीं कर सकते। सबसे बड़ा लक्ष्य होता है मोक्ष। ऐसा लक्ष्य मनुष्य ही बना सकता है और वही मोक्ष तक पहुंच सकता है।

कैसे जीएं?

कुछ लोग निर्लक्ष्य जीवन जीते हैं। जीना है, इसलिए जीते हैं। ऐसे लोग जीने की कोई विद्या नहीं अपनाते। कैसे जीना चाहिए?ऐसा प्रश्न इनके सामने कभी आता ही नहीं। जिनके सामने कलात्मक या सार्थक जीवन जीने का लक्ष्य होता है, वे उक्त प्रश्न पर गंभीरता से विचार करते हैं। निराशा और कुंठा में जीना उनको पंसद नहीं होता। उनके सामने जीने की एक प्रक्रिया होती है। वे सोचते हैं- पर्वत की चोटी के देवदार न बन सकें तो कम से कम घाटी का पौधा तो पादवीथी तो बनें। जीवन का एक-एक क्षण सार्थक हो, इसके लिए समय का सम्यक नियोजन करना सीखें। विधायक भावों का विकास करें। हर स्थिति में संतुलन बना रहे। दुःख में सुख की खोज करें। महत्वाकांक्षाओं के जाल में न फंसकर सहजभाव से अपने पुरुषार्थ का उपयोग करें। यह चिंतन एक विशिष्ट जीवन शैली की सूचना देने वाला है। जो लोग इस विधि से जीने का संकल्प करते हैं, वे कुछ उपलब्धि कर सकते हैं।

जीवन कब तक?

जैन दर्शन के अनुसार जीवन का संबंध पर्याप्ति और प्राण के साथ है। जन्म के प्रारंभ में पौद्गलिक शक्ति के निर्माण का नाम पर्याप्ति है। पर्याप्ति की अपेक्षा रखने वाली जीवनीशक्ति का नाम प्राण है। पर्याप्तियां छह हैं और प्राण दस हैं। सबसे पहले आहार पर्याप्ति का निर्माण होता है। उसका संबंध आयुष्य प्राण के साथ है। जब तक आहार, तब तक आयुष्य। ओज आहार समाप्त होने के बाद आयुष्य की समाप्ति निश्चित है। दूसरी पर्याप्ति है- शरीर पर्याप्ति। उसका संबंध कायबल प्राण से हैं। इसको शरीर प्राण भी कहा जा सकता है। इंद्रिय पर्याप्ति पांच इंद्रिय प्राण से संबंध रखती है। श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति का संबंध श्वासोच्छ्वास प्राण से है। भाषा पर्याप्ति वचनबल प्राण से जुड़ी हुई है और मनः पर्याप्ति का संबंध मनोबल प्राण के साथ है।

मनुष्य का जीवन न तो केवल आत्मा के आधार पर चलता है और न केवल शरीर के आधार पर। आत्मा और शरीर दोनों का योग होता है तब जीवन चलता है। जीवन की यही सामग्री संसार के प्रत्येक प्राणी को उपलब्ध होती है। इससे जीवन-यात्रा का प्रारंभ हो जाता है, पर जीवन दर्शन नहीं बनता। उसके लिए योग और उपयोग की अपेक्षा रहती है।

मन, वचन और काया की प्रवृत्ति का नाम योग है। प्रवृत्ति अच्छी और बुरी-दोनों प्रकार की होती है। विवेकपूर्वक की गई प्रवृत्ति सुप्रवृत्ति है। इस बात को यों भी कहा जा सकता है कि आध्यात्म साधना की दृष्टि से की जाने वाली प्रवृत्ति सुप्रवृत्ति है। लौकिक या शारीरिक दृष्टि से की जाने वाली प्रवृत्ति व्यवहार सम्मत होने पर भी शुभ प्रवृत्ति नहीं है। फिर भी उसमें विवेक रहे तेा उसके औचित्य पर प्रश्नचिन्ह नहीं लगता।

उपयोग का अर्थ है- शुद्ध चेतना का व्यापार। यह ज्ञानात्मक और दर्शनात्मक होता है। उपयोग की चेतना क्षायिक और क्षायोपशमिक भाव की चेतना है। क्षायिक भाव से उपलब्ध होने वाला ज्ञान केवल ज्ञान है और दर्शन केवलदर्शन है। शेष ज्ञान और दर्शन क्षायोपशमिक भाव है। उनमें मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान और मनः पर्यवज्ञान-ये चार ज्ञान एवं चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन और अवधिदर्शन- ये तीन दर्शन सन्निहित हैं।

योग का अर्थ है- प्रवृत्ति अथवा यों कहा जा सकता है कि हमारी प्रवृत्ति का मूल स्रोत योग है और उसका परिष्कारक उपयोग है। जहां योग, उपयोग से नियंत्रित रहता है, उस जीवन को प्रशस्त माना जाता है।

जीवन समाप्त कहां होता है?

जीवन की परिभाषा और मीमांसा में अनेक दृष्टियां काम करती हैं। जीवन की समाप्ति में भी उन दृष्टियों को सामने रखना आवश्यक है। शरीर, इंद्रिय आदि सात स्तरों के आधार पर जीवन की व्याख्या को स्वीकृत किया जाए तो शरीर और चेतना का योग जीवन है और इनका वियोग जीवन की समाप्ति है। स्थूल शरीर का वियोग होने पर भी संसारी आत्मा सूक्ष्म-शरीरों से बंधी हुई रहती है। सूक्ष्म शरीर पुनः स्थूल शरीर का निर्माण करते हैं और जीवन-यात्रा फिर शुरू हो जाती है। पर्याप्ति और प्राण के आधार पर टिकने वाला जीवन भी एक निश्चित कालावधि में सिमटा रहता है। एक बिंदु पर पहुंचकर पर्याप्ति और प्राण का सामर्थ्य समाप्त हो जाता है। यह क्रम तब तक चलता रहता है, जब तक चेतना अपने शुद्ध स्वरूप को उपलब्ध नहीं हो जाती।

किसका जीवन बनता है दर्शन?

जो व्यक्ति विलक्षण जीवन जीते हैं, कलापूर्ण जीवन जीते हैं, जागृति का जीवन जीते हैं, उनका जीवन दर्शन बनता है। जिन व्यक्तियों का जीवन दर्शन बना है, उनमें महावीर हमारे आदर्श हैं। उन्होंने अपने जीवन का लक्ष्य निर्धारित किया। लक्ष्य के अनुरूप रास्ता लिया। स्वीकृत रास्ते पर पूरी निष्ठा से चले। उनका जीवन दर्शन बन गया।

महावीर का जन्म विलक्षण ढंग से नहीं हुआ था। उनका बचपन भी सामान्य बच्चों की तरह बीता। उन्होंने युवावस्था में प्रवेश किया। तब तक कोई विलक्षणता प्रकट नहीं थी। अट्ठाईस वर्षों का उनका जीवन एक प्रकार का जीवन था। उसके बाद दो वर्षों का जीवन निर्धारित लक्ष्य की पृष्ठभूमि को मजबूत बनाने वाला था। तीस वर्ष की अवस्था में उन्होंने अपने जीवन को नया मोड़ दिया। परिवार, राजभवन राज्य वैभव से पीठ फेरकर वे चले और बारह वर्ष तक एकाकी चलते रहे। उनका लक्ष्य था- हर स्थिति में सामायिक की साधना। सामायिक का अर्थ है- समता में रहना, अपने आप में रहना। उन्होंने समता का जीवन जीया। उसके बाद कहा-

लाभालाभे सुहे दुक्खे, जीविए मरणे तहा।
समो निंदापसंसासु तहा माणावमाणओ।।

लाभ-अलाभ, सुख-दुःख, जीवन-मरण, निंदा-प्रशंसा और मान-अपमान इन पांच विरोधी युगलों में संतुलित रहने वाले व्यक्ति का जीवन बनता है दर्शन ।

अणिस्सिओ इहं लोए, परलोए अणिस्सिओ।
वासीचंदणकप्पो य असणे अणसणे तहा।।

जो ऐहिक और पारलौकिक आशंका से मुक्त रहता है, वसौले के प्रहार और चंदन के विलेपन को एक दृष्टि से देखता है तथा भूख होने पर भोजन मिलने या न मिलने की स्थिति में सम रहता है, उस व्यक्ति का जीवन दर्शन बनता है।

प्रेक्षा है एक मार्ग-

महावीर का जीवन दर्शन समता का दर्शन है। उसे हर आदमी अपना जीवन दर्शन कैसे बना सकता है?यह एक अहम प्रश्न है, क्योंकि महावीर बनकर साधना करने की क्षमता सबमें नहीं होती। जो लोग वैसी कठोर साधना नहीं कर पाते, उन्हें भी निराश होने की जरूरत नहीं है। उनके लिए सीधा-सा मार्ग है प्रेक्षा का। प्रेक्षा का अर्थ है- देखना। अपने आपको देखना। गहराई से देखना। केवल देखना। जिसने देखना सीख लिया, उसने प्रेक्षा को पा लिया। प्रेक्षा को पाने वाला समता से जी सकता है और अपने जीवन को दर्शन बना सकता है।

क्षांति से क्या मिलेगा?

❁ आचार्य महाश्रमण

प्रश्न किया गया- खंतीए णं भंते! जीव किं जणयइ?भंते! क्षांति के द्वारा जीव क्या उत्पन्न करता है?उत्तर दिया गया- खंतीए णं परीसहे जिणइ। क्षांति से वह परीषहों पर विजय प्राप्त कर लेता है। आध्यात्मिक साहित्य में क्षमा का बहुत महत्त्व है। आत्म-साधना की दृष्टि से कषाय-विजय बहुत आवश्यक है। कषाय-विजय का एक आयाम है- क्षमा की साधना। शान्त्याचार्य ने उत्तराध्ययन की वृहद्वृत्ति में क्षांति का एक अर्थ किया है- क्षांतिः क्रोधजयः गुस्से को जीत लेना क्षांति है। क्षांति का एक अर्थ है- मन के प्रतिकूल कोई परिस्थिति आ जाए, उसे सहन कर लेना । संस्कृत व्याकरण के अनुसार सहन करने के अर्थ में क्षमूच् धातु का प्रयोग किया जाता है, जिससे क्षांति शब्द निष्पन्न होता है। सहन करना जीवन का एक बहुत बड़ा गुण है और एक प्रकार का तप भी है। अच्छी जीवनशैली के तीन सूत्र बताए गए हैं-

कम खाना- आहार का संयम करना।

गम खाना- सहन करना।

नम जाना- विनम्रता का प्रयोग करना।

गम खाना जीवन को सफल बनाने का तरीका है और आत्म-कल्याण की दृष्टि से भी एक महत्वपूर्ण उपाय है, साधना है। उत्तराध्ययन सूत्र के दूसरे अध्ययन में बाईस परीषहों का उल्लेख मिलता है। साधु का धर्म है कि वह बाईस परीषहों को सहन करे। प्रश्न हो सकता है कि मुनि परीषहों को सहन क्यों करे?समाधान दिया गया- मार्गाच्यवननिर्जरार्थम्। स्वीकृत मार्ग से च्युत न होने के लिए और कर्मों को क्षय करने के लिए मुनि परीषहों को सहन करे। जैसे समरांगण में शूरवीर योद्धा होता है, वह शत्रुओं से परास्त नहीं होता। यथापेक्षा उन पर प्रहार करने की कोशिश करता है। सामने वाले के प्रहारों से घबराकर यदि सैनिक पीछे लौट जाए तो वह गौरव की बात नहीं होती। उसके लिए एक लघुता की अथवा लज्जा की बात होती है। सैनिक के लिए दो बातें गौरवास्पद होती हैं-

शत्रुओं के साथ लड़कर विजय प्राप्त करना।

शत्रुओं से लड़ते-लड़ते शहीद हो जाना।

साधु भी धर्म- समरांगण का एक सैनिक होता है। वह इस धर्म समरांगण में परास्त हो जाए, परीषहों से घबरा जाए, साधुत्व को छोड़ने की भावना मन में आ जाए अथवा साधुत्व को छोड़ दे तो वह उसके लिए लज्जा की बात होती है। साधु के लिए गौरव की बात है कि वह परीषहों को सहन करे। क्षुधा, पिपासा, शीत, उष्णता आदि विभिन्न प्रकार की स्थितियां आ सकती हैं। कभी भोजन पूरा मिले और कभी न भी मिले, इसलिए साधु के लिए कहा जाता है- कदेइ घी घणा और कदेइ मुट्ठी चणा यानी मुनि को कभी अच्छा और पर्याप्त मात्रा में भोजन मिल सकता है, कभी रुखा-सूखा और अल्प मात्रा में मिल सकता है अथवा कभी बिलकुल भी नहीं मिलता। साधु-साध्वियां यात्रा करते हैं। अनेक गांवों/शहरों में जाते हैं। कहीं सम्मान मिलता है तो कहीं पर लोग तिरस्कारपूर्ण भाषा का प्रयोग भी कर सकते हैं। इन सब स्थितियों को साधु शांत भाव से सहन करे।

सहनशीलता तो गृहस्थ समाज के लिए भी अपेक्षित है। कोई कार्यकर्ता है या नेता है, उसकी कोई आलोचना करे, गालियां दे या कभी मारपीट भी हो जाए तो कार्यकर्ता और नेता को परिस्थितियों व आलोचना आदि को प्रसन्न मन से सहन करना चाहिए और अपने गंतव्य की ओर आगे बढ़ते रहना चाहिए। राजनीति के क्षेत्र में भी कहीं-कहीं प्रतिपक्ष की कितनी आलोचना या निन्दा की जाती है। अच्छा कार्य किया जाता है उसमें भी कोई-न-कोई नुक्स निकालने का प्रयास किया जाता है फिर भी राजनीति के लोगों को भी सहन करना चाहिए। जहां सहिष्णुता की ज्यादा कमी है या गुस्से की ज्यादा वृत्ति है, वहां कठिनाई पैदा हो जाती है।

एक पिता के सात पुत्र थे। सात पुत्रों के बाद एक पुत्री का जन्म हुआ। वह मां-बाप और भाइयों की लाडली थी। जब यौवन की दहलीज पर पांव रखा तो पिता ने सोचा-लड़की की शादी कर देनी चाहिए। क्योंकि कन्या के लिए कहा गया है- अर्थो हि कन्या परकीय- कन्या तो पराया धन है। इसे लम्बे काल तक घर में नहीं

रखना चाहिए। समय आने पर उसकी शादी कर देनी चाहिए। पिता ने पुत्री की शादी के लिए बातचीत की किन्तु कठिनाई एक ही थी वह बहुत गुस्सैल थी, कहना नहीं मानती थी। आखिर एक युवक मिल गया और लड़की की शादी कर दी गई। किन्तु वह ससुराल में सामंजस्य नहीं बिठा सकी। कुछ दिनों बाद भाई अपनी बहन को अपने घर ले आया।

बातचीत के दौरान पिता ने पूछा- बेटी! तुम्हारा ससुराल कैसा है?

लड़की- पिताजी! आपने मुझे कहां भेज दिया?अच्छा होता कि आप मुझे गला घोंटकर यहीं मार देते। वह तो साक्षात् नरक है।

पिता- तुम्हारे ससुरजी कैसे हैं?

बेटी- मेरे ससुरजी तो डाकी हैं।

पिता- तुम्हारी सास कैसी है?

बेटी- वह तो डायन है।

पिता- तुम्हारी ननद कैसी है?

बेटी- वह तो चुड़ैल है।

पिता- तुम्हारा पति कैसा है?

बेटी- वह तो साक्षात् यमदूत है।

पिता- बेटी! मेरे पास एक दवा है, जिसे लेने से तुम्हारा ससुराल स्वर्ग बन जाएगा।

बेटी- पिताजी! वह कौनसी दवा है और कब लेनी है?

पिता- ससुराल में जब कोई कुछ कहे तो तुम कमरे में जाकर यह दवा ले लेना और पन्द्रह मिनट तक मुंह में रखना। फिर गले से नीचे उतार देना।

कुछ दिनों बाद लड़की ससुराल गई। अब उसे कोई कुछ भी कहता तो वह कमरे में जाती और दवा मुंह में ले लेती। किसी को कुछ भी नहीं बोलती। वह बिलकुल शांत रहती। लम्बे समय तक यह क्रम चलता रहा। फिर सास ने सोचा, बहु तो बिलकुल बदल गई है, बहुत सयानी हो गई। तब सास ने परिवार के सभी सदस्यों को बुलाकर कहा- खबरदार है मेरी बहु को किसी ने कुछ कहा तो! मेरी बहुरानी के लिए कोई भी असम्मानपूर्ण शब्दों का प्रयोग नहीं कर सकता। फिर सास ने बहुरानी से कहा- बहुरानी! मैं तो अब वृद्ध हो गई हूं। ये घर की चाबियां अब तुम ही संभालो। तुम जैसा कहोगी, हम सब वैसा ही करेंगे। घर में बहु का सम्मान बहुत बढ़ गया। घर के सारे कार्य उसके निर्देश से संपन्न होने लगे। कुछ दिनों बाद बहु का भाई अपनी बहन को लेने के लिए आया। सास ने कहा- हमारी बहु को बहुत जल्दी वापिस पहुंचा देना। हमारे घर के सारे कार्य यही संभालती है।

जब बहु अपने पीहर आई और बातचीत के दौरान पिता ने पूछा- बेटी! अब तुम्हारा ससुराल कैसा है?

बेटी- पिताजी! आप द्वारा प्रदत्त दवा ने तो कमाल कर दिया। मेरा ससुराल तो स्वर्ग है।

पिता- तुम्हारे ससुरजी कैसे हैं?

बेटी- पिताजी! आपसे भी ज्यादा वात्सल्य देते हैं।

पिता- तुम्हारी सास कैसी है?

बेटी- वो तो मेरी मां से भी अधिक ममत्व भाव रखती हैं।

पिता- तुम्हारी ननद कैसी है?

बेटी- मेरी ननद तो मुझे अपनी सगी बहन से भी ज्यादा चाहती है।

पिता- तुम्हारा पति कैसा है?

बेटी- वे तो साक्षात् परमात्मा-परमेश्वर हैं।

अब सब विशेषण बदल गए। यह सब कैसे हुआ?क्षांति यानी सहनशीलता एक ऐसा तत्त्व है जो सबमें बदलाव ला सकता है और दूसरों के लिए सम्माननीय भी बना देता है। क्षांति के द्वारा जब व्यक्ति गुस्से पर नियंत्रण कर लेता है तब वह परीषहों, कठिनाइयों और समस्याओं पर विजय प्राप्त कर लेता है और शांत भाव से अच्छा जीवन जी सकता है।

प्रवृत्ति और निवृत्ति का चक्र

भाषा और ज्ञान- ये दोनों हमारे व्यवहार के प्रवर्तक या नियामक हैं। हम जानते हैं और जानने के बाद व्यवहार करते हैं। किसी को कहते हैं- प्रवृत्त हो जाओ, किसी को कहते हैं- निवृत्त हो जाओं और किसी को कहते हैं, कोई बात नहीं छोड़ो। धर्म को प्रवर्तक लक्षण माना गया हैं- चोदनालक्षणों धर्मः। कहा जाता है कि धर्म में प्रवृत्ति करो। अधर्म तुम्हारे लिए अहितकर है, इसलिए उससे निवृत्ति करो। यह प्रवृत्ति और निवृत्ति का चक्र सतत चल रहा है। ध्यान करो और चंचलता को छोड़ो, यह एक प्रेरणा है। विवेक चंचलता को कम करने या छोड़ने की बात कहता है। आदमी उलझ जाता है। वह सोचता है- यदि चंचल प्रवृत्ति अथवा सक्रियता को कम कर दिया तो हम निठल्ले बन जायेंगे। आज जो विकास हुआ है, वह बहुत कुछ चंचलता के कारण हुआ है। इतने पदार्थ, इतने संसाधन और उपकरण-ये सब ध्यान से बने हैं या चंचलता से बने हैं? निश्चय ही चंचलता से बने हैं। अगर सब ध्यान कर बैठ जाते, हाथ पर हाथ धर कर बैठ जाते तो न ये बहुमंजिली इमारतें बनती, न मोटरकार और हवाईजहाज बनते, खेतीबाड़ी भी नहीं होती। हिन्दुस्तान में ध्यान का बहुत विकास हुआ किन्तु अगर पूरा देश ध्यानी बन जाता तो खाने के लिए फिर बाहर से ही मांगना पड़ता। मंगाता भी कौन? भूखे ही मरना पड़ता।

आचार्य महाप्रज्ञ

प्रेक्षाध्यान के आगामी शिविर

समय-सारणी एवं अन्य विवरण

शिविर आयोजक : प्रेक्षा फाउण्डेशन

स्थान : तुलसी अध्यात्म नीडम्, जैन विश्व भारती, लाडनूं-341 306

प्रेक्षाध्यान साधना शिविर	01.07.17 से 08.07.17
प्रेक्षाध्यान साधना शिविर	01.08.17 से 08.08.17
प्रेक्षाध्यान साधना शिविर	01.09.17 से 08.09.17
प्रेक्षाध्यान साधना शिविर	01.10.17 से 08.10.17

16वाँ अन्तरराष्ट्रीय प्रेक्षाध्यान साधना शिविर

सान्निध्य : आचार्य श्री महाश्रमण

स्थान : कोलकाता **दिनांक :. 23.10.17 से 30.10.17**

अधिक जानकारी हेतु सम्पर्क करें : +91 1581- 226119, +91 82333 44482 / Visit : www.preksha.com

शिविर आयोजक : अध्यात्म साधना केन्द्र

स्थान : अध्यात्म साधना केन्द्र, महरौली, दिल्ली

प्रेक्षाध्यान साधना स्वास्थ्य शिविर	07.06.17 से 13.06.17
प्रेक्षाध्यान साधना स्वास्थ्य शिविर	22.06.17 से 28.06.17
प्रेक्षाध्यान साधना स्वास्थ्य शिविर	07.07.17 से 13.07.17
प्रेक्षाध्यान साधना स्वास्थ्य शिविर	21.07.17 से 27.07.17

अधिक जानकारी हेतु सम्पर्क करें : +91 96433 00652 / Visit : www.askpreksha.com

चिन्तन की भाषा

बड़ी समस्या है। एक ओर हम कहते हैं कि ध्यान करो, चंचलता को कम करो, निष्क्रिय बनो, दूसरी ओर हमारा सारा काम सक्रियता से चल रहा है, प्रवृत्ति की बहुलता से चल रहा है। आज का संसार तो इतना प्रवृत्ति बहुल हो गया है कि इसमें ध्यान की बात करना ही हास्यास्पद लगता है। आज का व्यक्ति इस भाषा में सोचता है- किसे फुर्सत हैं दो-चार घंटा आंख मूंदकर निकम्मा बैठने की। फिर हमारा विकास कैसा होगा?पिछड़ नहीं जायेंगे हम?

आखिर करें क्या? रहना सचाई में है, किन्तु जीना तो व्यवहार में है। जहां व्यवहार है वहां प्रवृत्ति निवृत्ति और उपेक्षा- तीनों चलेंगे। कोरी निवृत्ति की बात वहां समझ में नहीं आती इसीलिए सामान्य आदमी विवेक नहीं कर पाता किन्तु कुछ विवेक करने वाले भी दुनिया में होते हैं। प्राचीन संस्कृति साहित्य का सूत्र है- क्षीर-नीर विवेकवत् यथा हंस, जैसे हंस दूध और पानी का विवेक कर देता है। यह हंसों के लिए कहा गया है, वैसे ही मछलियां भी दूध और पानी को अलग कर देती हैं, नीबूं भी दूध और पानी को अलग कर देता है। यह विवेक है, विवेचन हैं, पृथक्करण है। आचार्य महाप्रज्ञ

कोलकाता में पहली बार

नमस्कार महामंत्र पर आधारित प्रेक्षाध्यान शिविर

सान्निध्य : परम पावन आचार्य श्री महाश्रमण

दिनांक : 14, 15, 16 जून 2017 | समय प्रात: 6.00 से 7.30

स्थान : विवेक विहार कॉम्पलेक्स, साउथ हावड़ा कोलकाता

आयोजक : प्रेक्षा फॉउंडेशन, जैन विश्व भारती

सहयोग राशि : 200/- मात्र

कार्यशाला हेतु ऑनलाइन एप्लीकेशन फार्म भरें।

www.preksha.com/ipmc/registartion.asp

सम्पर्क सूत्र

साउथ हावड़ा	**9339680317**
उत्तर हावड़ा	**9830080613**
साउथ कोलकाता	**9831052338**
पूर्वांचल	**9433092831**

अध्यात्म के मार्ग पर आगे बढ़ने के लिए आप सादर आमंत्रित है।

प्रेक्षा-कथा

संपादक - मुनि दुलहराज

स्वयं देखें, स्वयं सोचें

एक गधा जा रहा था। अंधेरा हो गया। वह रास्ता देख नहीं पा रहा था। एक वृक्ष पर उल्लू बैठा था। उसने कहा, गर्दभराज! तुम रास्ते से भटक गए हो। मैं तुम्हें मार्ग बताऊं?

उल्लू गधे की पीठ पर आकर बैठ गया। दोनों चले जा रहे हैं। गधे को अंधेरे में नहीं दिखता। उल्लू अंधेरे में ही देख पाता है। चलते-चलते प्रातःकाल हो गया। जैसे ही प्रकाश की किरण फूटी, उल्लू को दिखना बन्द हो गया। अब वह गधे का मार्गदर्शन कैसे करता?फिर भी वह गधे की पीठ छोड़ने को तैयार नहीं हुआ।

गधा चलता गया। उल्लू मार्गदर्शक बना था तो मार्गदर्शन देना भी आवश्यक था। वह स्वयं भ्रांत था, फिर भी वह मार्गदर्शन के लिए तत्पर था। गधा देख सकता था, किन्तु उसने मान लिया कि मेरा मार्गदर्शक उपस्थित है, फिर मुझे देखने की आवश्यकता ही क्या है?एक स्थान पर गधा उल्लू के निर्देशानुसार मुड़ा। वहां नदी थी। दोनों नदी में बह गए।

धर्मगुरु से बढ़कर हमारा कोई मार्गदर्शक नहीं हो सकता, यह तो हमने मान लिया, किन्तु इसका अर्थ यह तो नहीं कि हम स्वयं देखना ही बंद कर दें, स्वयं सोचना ही छोड़ दें।

दिशाहीनता

वह राज्य पोपाबाई का था। एक दिन अचानक ही एक मकान गिर गया। नया बना था, फिर भी गिर गया। पोपाबाई के पास शिकायत गयी। उसने कारीगर को बुलाकर कहा, अभी तो तुमने मकान बनाया और अभी गिर गया। दोष तुम्हारा है। दंड के लिए तैयार हो जाओ। कारीगर बोला, दोष मेरा नहीं है। चूना गीला अधिक था। दोष चूनेवाले का है। पोपाबाई ने चूने वाले को बुलाया। वह आकर बोला, दोष मेरा नहीं हैं चूने में जो पानी डाल रहा था, उसने ज्यादा पानी डाल दिया इसलिए चूना अधिक गीला हो गया। दोष उसका है।

पानी वाले को बुलाया गया। उसने कहा, मेरा इसमें दोष ही कहां है?जब मैं पानी डाल रहा था, उस समय एक बारात उधर से गुजर रही थी। अच्छे बाजे बज रहे थे। मैं उधर देखने लगा। पानी ज्यादा गिर गया। दोष बाजा बजाने वालों का है।

इस शृंखला का अंत कहाँ होगा? सब एक-दूसरे पर दोष मढ़ रहे हैं। कोई अपना दोष स्वीकार करना नहीं चाहता। हर व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को दोषी बनाकर अपने मन में सन्तोष का अनुभव कर रहा है। यही दिशाहीनता है।

श्रमण महावीर- एक मूल्यांकन

❁ डॉ. निजामुद्दीन

धार्मिक व्यक्ति को दोहरा जीवन जीना पड़ता है- एक भौतिक जीवन और दूसरा उसके भीतर छिपा हुआ चेतना का जीवन या आध्यात्मिक जीवन। जो भौतिक व्यक्ति है, वह केवल दृश्य-जीवन जीता है, शारीरिक जीवन जीता है या भौतिक जीवन जीता है। उसे बहुत अधिक गहराई में जाने की आवश्यकता नहीं होती। किन्तु आध्यात्मिक व्यक्ति उस भौतिक आवरण को चीर कर चेतना की गहराई तक पहुंचाने का प्रयत्न करता है इसलिये उसे बहुत सूक्ष्म और गहरे तल में उतरना होता है। आचार्यश्री महाप्रज्ञ के उपर्युक्त विचार उनके जीवन पर पूर्णतः चरितार्थ होते हैं। एक आध्यात्मिक जीवन जीने वाला ज्ञानी पुरुष ही महावीर के जीवन का अन्तःस्तलीय अध्ययन प्रस्तुत करने की पूर्ण क्षमता एवं योग्यता रखता है। आचार्यप्रवर ने अपनी पुस्तक 'श्रमण महावीर' में भगवान महावीर के जीवन के विविधायामों के मानवीय चित्र अत्यन्त सूक्ष्म तथा रसात्मक शैली में प्रस्तुत किये हैं, जो पूर्वाग्रह एवं परम्परामुक्त हैं। ऐसा सरस जीवन-वृत्त पढ़ते हुए मालूम होता है जैसे लेखक ने भगवान महावीर के जीवन को, उनके युग को अपनी आंखों से देखा है। लेखक १०० से अधिक ग्रन्थों के रचयिता है और उनकी आलोच्य पुस्तक एक महत्वपूर्ण कृति है, जिसका अंग्रेजी भाषा में भी सुन्दर अनुवाद मित्र परिषद् कोलकाता द्वारा प्रकाशित हो चुका है। पुस्तक के २७६ पृष्ठों में भगवान महावीर के जन्म से लेकर निर्वाण-प्राप्ति तक, अनेक प्रसंगों-घटनाओं को ४७ खण्डों में विभक्त किया गया है। पुस्तक में कुल ३६० पृष्ठ हैं और इसका प्रकाशन १९७४ में किया गया। उनके रचनात्मक, धार्मिक, दार्शनिक अवदान को दृष्टि में रखते हुए आचार्यश्री तुलसी ने उन्हें अपना सुयोग्य उत्तराधिकारी घोषित कर युवाचार्य महाप्रज्ञ की उपाधि से सुशोभित किया था।

आचार्य महाप्रज्ञ ने पुस्तक के स्वकथ्य में आयारो, आयारचूला, कल्पसूत्र (जीवन-वृत्त) भगवती- सूत्र, उवासगदसाओ, नायाधम्मकहाओ, सूयगडो, (जीवन-वृत्त और तत्वदर्शन), आचारांगचूर्णि, आवश्यकचूर्णि, आवश्यकनिर्युक्ति, उत्तरपुराण, चउवन्न महापुरिसचरियं, त्रिषष्टिशलाका पुरुष- चरित्र आदि ग्रन्थों से प्रामाणिक जीवन-वृत्त-विषयक प्रचुर सामग्री से मनचाहा लाभ उठाया है। इस बिखरी सामग्री को सुव्यवस्थित और पल्लवित किया है। लेखक ने भगवान महावीर के उपदेशों, संदेशों तथा सिद्धान्तों को रोचक घटनाओं, रसाप्यायित प्रसंगों से जोड़कर अधिक ग्राह्य और प्रभविष्णु बनाया है। अपनी इस शैली के लिए ऋणी माना है उन्होंने बौद्ध साहित्य का; जिसमें भगवान बुद्ध की वाणी को घटनाओं- प्रसंगों में शृंखलाबद्ध किया गया है। हिन्दी में जीवन-वृत्त रचने की यह नवीन शैली है, जिसे लेखक ने विविध रंगों से अनुरंजित कर एक चित्र-शाला बना दिया है। पुस्तक में जादू-टोना, देवी घटनाओं अति प्राकृतिक तत्त्वों, योगशक्तियों का यत्र-तत्र अभिनिवेश युगानुकूल है। महावीर से सम्बद्ध प्रसंग भी चामत्कारिक हैं, जिनसे उनका पौरुषमय एवं ज्ञानमय व्यक्तित्व और अधिक प्रखर तथा तेजवंत हो उठा है।

लेखक ने जहां त्रिशला के स्वप्नों का वर्णन किया है, वहां दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनों परम्परानुमोदित क्रमशः १६ और १४ स्वप्नों को फुटनोट में दिया है, परन्तु उनका वर्णन करते हुए उनकी संख्या १७ तक पहुंचा दी। यह १७ की स्वप्न-श्रृंखला किस परम्परानुकूल है?दूसरे, लेखक ने इस स्वप्न श्रृंखला के भेद के कोई मनोवैज्ञानिक कारण भी नहीं व्यक्त किये। इस मत वैभिन्य का कारण अस्पष्ट रह गया। श्वेताम्बरीय परम्परा में जहां श्री अभिषेक लिखा है, वहां आचार्य तुलसी ने लक्ष्मी लिखा है। एक ही परम्परा तथा सम्प्रदाय में यह भेद कैसा? ऐसा ही मतभेद महावीर की जन्मतिथि को लेकर है। यहां उनकी जन्म-तिथि चैत्र शुक्ल त्रयोदशी (३० मार्च ५६६ ई.पू.) दी गई है। आचार्य विद्यानन्दजी आदि जो दिगम्बरीय परम्परानुयायी है, उन्होंने चैत्र शुक्ल त्रयोदशी (२६ मार्च ५६८ ई. पू.) मानी है। अच्छा होता यदि पुस्तक में इस प्रकार के मतभेदों को दृष्टि में रखा जाता, क्योंकि महावीर के जीवन की कई घटनाओं पर अद्यावधि मतभेद बना हुआ है। लेखक ने महावीर- युगीन धार्मिक, राजनीतिक वातावरण का चलता-सा वर्णन किया है। गणतन्त्र की सफलता के लिए जो बातें उल्लिखित है, उनकी अर्थवत्ता आज भी स्मरणीय हैं सहिष्णुता, वैचारिक उदारता, सापेक्षता, स्वतन्त्रता और एक दूसरे को निकट से समझने की मनोवृत्ति का विकास आवश्यक माना है। इनके अभाव में गणतंत्र की सफलता संदिग्ध है। मैं यह भी शामिल करना चाहूंगा कि राष्ट्रीय एकता के ये मूलाधार है, भावात्मक एकता की ये धुरी हैं। भारत की वर्तमान विषम राजनीतिक और साम्प्रदायिक स्थिति को इन आदर्शों से संभाला जा सकता है, बशर्ते कि सच्चे मन से, निःस्वार्थ भाव से इन्हें कार्यान्वित किया जाय। लेखक ने भगवान महावीर के पांच नामों का उल्लेख तो अवश्य किया है, लेकिन उनकी पृष्ठभूमि को स्पष्ट नहीं किया, उनके मनोवैज्ञानिक आधारों को अछूता छोड़ दिया। भगवान महावीर के महाभिनिष्क्रमण को नये रूप में देखने का प्रयास किया है- उन्हें स्वतंत्रता का अन्वेषी माना हैं स्वतन्त्रता का अन्वेषी घर, परिवार और वैभव तीनों को विसर्जित कर आगे बढ़ता है। परतंत्रता उसके लिये महापाप है, स्वतंत्रता ही उसके लिए जीवन का ध्येय है। महर्षि मनु के कथन का औचित्य स्वीकारते हुए परतन्त्रता में दुःख और स्वतन्त्रता में सुख माना है। राम और महावीर की तुलना आचार्य महाप्रज्ञ ने स्वतन्त्रता के आधार पर करके राम को कर्मवीर और महावीर को धर्मवीर माना है। दोनों को भारतीय संस्कृति के दो पहिए कहा है। राम ने बाह्य शत्रुओं को पराजित किया, महावीर ने अपने आन्तरिक- शत्रुओं संस्कारों पर विजय प्राप्त की।

शरीर धर्म का आद्य-साधन है, यह एक विवादस्पद विषय है। लेखक ने शरीर को अधर्म का आद्य-साधन मानते हुए कहा है कि अधर्म का मूल आसक्ति है, जिसका प्रारम्भ शरीर से होता है, लेकिन शरीर को जड़ मानने पर यह संभव नहीं। जड़त्व में आसक्ति कैसे होगी? आसक्ति तो चेतन में होगी। यहां यह ध्यातव्य है कि मोह या आसक्ति की अधिकता वर्जित कही जा सकती है, बिना मोह आसक्ति या प्रेम-ममत्व के, अपनेपन की भावना के (इसमें भी मोह है) कोई दूसरे की सेवा-सहायता क्या करेगा?तरस खाकर, करुणा दर्शाकर कौन हमदर्दी दिखलायेगा?हमारी सेवा-सहायता, करुणा-दया का कारण दूसरे की दीन दशा है, परन्तु उसके प्रति ममत्व भी तो है। यह ममत्व, प्रेम, दया त्याज्य नहीं, यह तो पुण्य

के आदि स्रोत हैं। अधर्म, पाप, हिंसा-स्मृति में माने जा सकते हैं, स्मृति चेतन है। मनुष्य स्वप्नावस्था में शरीर से कोई पाप नहीं करता, वहां केवल स्मृति ही पाप करती है, कराती है। जागृतावस्था में शरीर का योग हो सकता है। शरीर बेचारा जड़ है- कहकर लेखक यह भी कहता है कि शरीर का एक भी अणु ऐसा नहीं हैं जिसमें चेतना अनुप्रविष्ट न हो। यहां एक विरोधाभास है।

भय से मुक्ति अभय का आलोक- में भय-अभय के प्रसंग में, शूलपाणि-यज्ञ का व भूत-प्रेतों का हिंसात्मक व्यवहार, चिर-अर्जित छिपे संस्कार माने हैं।

यह प्रतीक अधिक मान्य नहीं, क्योंकि परम्परा-पोषित, चिर-प्रतिष्ठित धारणा यही है कि इस प्रकार के उपसर्ग उन्हें सहन करने पड़े, उन्हें प्रतीकार्थ देना हितकर नहीं। क्या चण्डकौशिक के प्रसंग को कोई प्रतीक-रूप में ग्रहण कर सकेगा?रौद्र रस की प्रतिमा दृष्टिविष चण्डकौशिक को अभय और मैत्री की कसौटी माना जा सकता है , इससे चार निष्पतियां सम्पन्न हुई- १. अभय-मैत्री, २. बाह्य प्रभाव से मुक्ति, ३. क्रूरता का मृदुलता में परिवर्तन, ४. जनता के भय का निवारण। ऐसा माना गया है कि साधना-काल के साढ़े बारह वर्षों में भगवान महावीर ४८ मिनट सोये और एक बार दस स्वप्न देखे। लेखक ने तप-काल के उपवासों की तालिका भी दी है। महावीर ने अपने सुदीर्घ साधना काल में केवल ३५० दिन भोजन किया। वे शरीर-धारणार्थ ही भोजन करते थे और शरीर- मन के बंधन तोड़कर आत्मजगत् में प्रवेश कर रहे थे। उन्होंन सरस- नीरस, ताजा-बासी सभी प्रकार का भोजन ग्रहण किया। उन्होंने १६ दिन-रात अबाध रूप से ध्यान-प्रतिमा की साधना की। वे ऊर्ध्व, तिर्यक और अधः तीनों प्रकार का ध्यान करते थे। इस प्रकार महावीर की तपश्चर्या का यहां अच्छा वर्णन किया गया है।

इन्द्रभूति के प्रसंग में आचार्य महाप्रज्ञ ने मानसिक द्वन्द्व का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया हैं इन्द्रभूति का अहं इस प्रकार मुखरित हुआ है- मुझे कौन नहीं जानता?मेरे नाम से मालव तक के लोग कांपते है। सौराष्ट्र में मेरी धाक है। काशी-कौशल के पंडितों का मैंने मान-मर्दन किया है। क्या सूर्य किसी से छिपा है?मालूम होता है स्वयं अहं के मुख से ये शब्द निर्गत हुए हैं। रावण जैसा अहंकारी ही इस प्रकार अहं-गर्भित वाणी बोल सकता है। महावीर ने इन्द्रभूति के उस संदेह का निवर्तन किया जो उन्हें जीव के अस्तित्व के बारे में था। इसी प्रकार अग्निभूति के कर्म के बारे में संदेह को दूर किया। महावीर ने कैसी महत्वपूर्ण बात जीव के अस्तित्व में कही है- वर्तमान का अस्तित्व ही अतीत और भविष्य के अस्तित्व के विषय का साक्ष्य है। एक परमाणु भी अपने अस्तित्व से च्युत नहीं होता, तब मनुष्य अपने अस्तित्व से च्युत कैसे होगा?यह जीवन इन्द्रियातीत सत्य है। इसी प्रकार अग्नि-भूति की शंका का निवारण इस प्रकार किया है- कर्म और क्या है, क्रिया की प्रतिक्रिया ही तो है। यहां लेखक ने एक सुन्दर बात कही है- शिष्यत्व और तर्कशीलता साथ-साथ नहीं चल सकते। शिष्यत्व के साथ तर्क से अधिक जिज्ञासा होना परम हितकर है।

भगवान महावीर ने अपने समवसरण में ज्ञान-त्रिपथगा यह कहकर प्रवाहित की- उत्पाद व्यय और ध्रौव्य। अर्थात् पदार्थ उत्पन्न होता है,वह विनाश को प्राप्त होता है।- वह उत्पाद-व्यय धर्मा है, परिवर्तनशील है, परन्तु ध्रौव्य भी है। परमाणु ध्रुव हैं लेखक ने इनका अतिसंक्षिप्त वर्णन किया हैं ये तीन शब्द असीम गम्भीर अर्थ रखते हैं। महावीर का दर्शन इन्हीं पर आधारित है। इनकी विशद व्याख्या अपेक्षित थी, क्योंकि इन्हीं को आधार मानकर गणधरों ने बारह सूत्रों-द्वादशांग की रचना की।

महावीर ने संघ-व्यवस्था का मूलाधार माना है- अहिंसा, स्वतंत्रता और सापेक्षता का दृष्टिकोण। व्यवस्था की दृष्टि से उन्होंने अपने गणों के नेतृत्व को सात इकाइयों में विभक्त किया है- आचार्य, उपाध्याय, स्थविर, प्रवर्तक, गणी, गणधर, गणावच्छेदक। संघीय व्यवस्था के लिए दिनचर्या वस्त्र भोजन विहार, पात्र, अभिवादन, सामुदायिकता, सेवा पर अच्छा प्रकाश डाला है। यह मानने में किसी को आपत्ति नहीं होनी चाहिये कि संघीय नेतृत्व का इतना सम्यक्-विकास किसी अन्य धर्म-परम्परा में उपलब्ध नहीं। परिग्रह के मुख्य दो प्रकार-शरीर और वस्तु का स्पष्ट वर्णन है। परन्तु यह कारण स्पष्ट नहीं किया कि श्वेताम्बर-परम्परा में वस्त्र-परिग्रह का उत्तरोत्तर विकास कैसे होता गया। यहां साधु के परिग्रह को ही लक्षित किया गया हैं इसी प्रसंग में अभिवादन को लेकर यह कहा गया है कि उस समय लोकमान्यतानुसार पुरुष का प्राधान्य था। धर्म- प्रवर्तक पुरुष है, धर्मोपदेश पुरुष है, पुरुष ज्येष्ठ है और लौकिक पथ में पुरुष प्रभु होता है। भगवान बुद्ध ने स्त्रियों के अभिवादन की मनाही की और ऐसा करने को उत्कट का दोष माना। महावीर ने साधु-साध्वियों के परस्पर अभिवादन का कोई निर्देश नहीं दिया, लेकिन उत्तरवर्ती साहित्य में सौ वर्ष की दीक्षित साध्वी आज के दीक्षित साधु की वन्दना करे। अर्थात् साधु-साध्वी का दीक्षा-पर्याय छोटा या ज्येष्ठ होने पर अभिवादन करना मान्य है, परन्तु परस्पर वे एक-दूसरे को कैसे अभिवादन करें, यह स्पष्ट नहीं किया। इस गुत्थी को लेखक नहीं सुलझा सका। अनजान, अपरिचित साधु-साध्वी का दीक्षा-पर्याय कैसे बिना बातचीत के मालूम हो सकता है?यह अच्छी बात है कि महावीर ने साधक को संघ में रहकर या संघ से बाहर एकाकी साधना करने की छूट दी है।

अतीत का सिंहावलोकन में उन विशेष उपलब्धियों एवं उद्देश्यों की चर्चा की है, जिनका लक्ष्य महावीर के साधना-काल में था- १. क्षत्रियों और ब्राह्मणों की प्रतिद्वन्द्विता समाप्त कर उनमें एकता की स्थापना करना, २. १७५ दिन भोजन न करने पर अन्ततोगत्वा चन्दनबाला से मधुकरी ग्रहण कर नारी-जाति का पुनरुत्थान, ३. दास-प्रथा का विरोध, समता-धर्म की प्रतिष्ठापना, ४. चण्ड कौशिक के डसने पर विषमता के आसन पर समता की स्थापना, हिंसा पर अहिंसा की, क्रोध पर प्रेम की विजय, ५. ध्यान के साथ तप मिलाकर एकांगिता की वेदी पर समन्वय, ६. अहिंसा और सापेक्षता को जनता तक पहुंचाने के लिये संघ-निर्माण की आवश्यकता, ७. महावीर द्वारा भविष्य-वाणी करना, नियतिवाद में आस्था, ८. योग-शक्ति का प्रयोग।

पुस्तक में भगवान महावीर द्वारा की गई भविष्यवाणी का कई बार वर्णन हुआ है। सम्राट श्रेणिक के पुत्र मेघकुमार को कहा कि वह पूर्व-जन्म में हाथी था। इस प्रकार भगवान महावीर भूत, भविष्य, वर्तमान सभी के ज्ञाता थे। गोशालक को बतलाया कि अमुक मिल का पौधा नहीं फलेगा और वह भविष्य-वाणी सच निकली। एक बार उन्होंने गोशालक को अपने बारे में बतलाया कि वह १६ वर्षों तक जीवित रहेंगे। यौगिक शक्तियों का प्रयोग महावीर भी करते थे। गोशालक पर फेंकी गई तेजोलब्धि को रोकने, उसे हतप्रभ करने के लिए महावीर ने शीत तेजोलब्धि नामक योगशक्ति का प्रयोग किया। महावीर ने गोशालक को अतीन्द्रिय-ज्ञान का थोड़ा परिचय तथा आन्तरिक शक्ति के रहस्य सिखाये।

क्रान्ति का सिंहनाद पुस्तक का सबसे लम्बा और महत्वपूर्ण अध्याय है। इसमें लेखक ने १. जातिवाद, २. साधुत्व-वेश और परम्परा, ३. सम्प्रदाय, ४. धर्म और वाम-मार्ग, ५. साधना- पथ का समन्वय, ६.जनता की भाषाः जनता के लिए, ७. करुणा और शाकाहार, ८. यज्ञ-समर्थन या रूपान्तरण, ९. युद्ध और अनाक्रमण, १०. असंग्रह-आन्दोलन । इन सभी की चर्चा आधुनिक सन्दर्भ में विशदता से की है। महावीर का युग जातिवाद और मतवाद के प्रभुत्व का युग था और निःसंदेह हमारे युग में भी इनके प्रभुत्व के दर्शन होते हैं। महावीर ने लोगों से कहा- कोई भी निर्ग्रन्थ किसी को गोत्र से सम्बोधित न करे, क्योंकि गोत्र मनुष्य के शरीर पर केंचुली है, इससे मनुष्य अंधा हो जाता है, इसके टूटने पर ही वह देख सकता है। उनके धर्म-संघ में दीक्षित होने पर न कोई सम्राट रहता है और न कोई नौकर, वे बाहरी

उपाधियों से मुक्त होकर उस लोक में पहुंच जाते हैं जहां सब सम हैं, कोई विषम नहीं। उर्दू कवि डॉ. इकबाल ने भी जातीय एकता को लक्ष्य कर कहा-

एक ही सफ में खड़े हो गये महमूदो अयाज
न कोई बन्दा रहा और न कोई बन्दा नवाज

आत्मा में समता की स्थापना होने पर सम्राट और नौकर की विस्मृति हो जाती है, अहं का परिशोधन हो जाता है। जाति का चाण्डाल हरिकेशी महावीर के धर्मसंघ में दीक्षित होने पर मुनि हो गया था। लेखक ने महावीर की बातों को कहीं-कहीं बहुत ही संक्षिप्त नाटकीय शैली में भी व्यक्त किया है। एक स्थान पर महावीर का कथन है- श्रमण होता है समता से, ब्राह्मण होता है ब्रह्मचर्य से, मुनि होता है ज्ञान से और साधु उसे कहते हैं जो ज्ञान और दर्शन से सम्पन्न हो, संयम और तप में रहे। महावीर ने भिक्षु या गृहस्थ की श्रेष्ठता के स्थान पर संयम को श्रेष्ठ माना। संयमरत ही श्रेष्ठ है। धर्म और सम्प्रदाय के भेद को स्पष्ट करते हुए कहा- धर्म दीपक की लौ है, सम्प्रदाय उसका पात्र है। धर्म चैतन्य है, सम्प्रदाय उसको अभिव्यक्ति देने वाली भाषा है। महावीर ने अहिंसा को शाश्वत-धर्म मानकर, मांसाहार को पूर्णतः निषिद्ध घोषित किया। अहिंसा या निरामिष की घोषणा संभवतः जैन-धर्म में ही सबसे प्राचीन है, वैदिक-धर्म में मांसाहार थे, बौद्ध धर्म में अनुयायी भी मांसाहारी थे। इस प्रकार महावीर की यह धर्म को, विश्व-धर्म को, विश्व-संस्कृति को परमोज्ज्वल देन है।

यहां युद्ध तथा आक्रमण को लेकर भी चर्चा की है। आक्रमण में पहल नहीं करनी चाहिए, लेकिन प्रत्याक्रमण का, आक्रमण के प्रतिरोध का, निषेध भी नहीं किया मानवीय हितों के विरुद्ध अभियान को न रोकना कायरता है। यहां निःशस्त्रीकरण तथा सह-अस्तित्व की नीति पर भी प्रकाश डाला गया है। इनके द्वारा समत्व की अनुभूति होती है और मैत्री-भाव का प्रादुर्भाव होता है।

निःशस्त्रीकरण की समस्या आज कितनी महत्त्वपूर्ण है, यह किसी से छिपा नहीं। निःशस्त्रीकरण की आधार-भित्तियां तीन मानी गई है।- १. शस्त्रों का अव्यापार, २. शस्त्रों का अवितरण, ३. शस्त्रों का अल्पीकरण। युद्धाक्रान्त विश्व के लिये यह सिद्धान्त आज काफी उपयोगी है। इससे तृतीय विश्व-युद्ध के प्रलयंकारी मेघ छितराये जा सकते हैं।

परिग्रह को लेखक ने आज के युग की मूल समस्या माना है और एक अच्छी बात यह कही कि जो अपरिग्रह का आचरण नहीं करता वह धर्म का आचरण नहीं करता। परिग्रह लौकिक भाषा में अर्थ एवं वस्तुओं के संग्रह पर अवलम्बित हैं मिलावट, नाप-तौल में कमी, नकली वस्तु का प्रचार, दूसरों की जीविका छीनना या श्रमिकों से अधिक काम लेकर मजदूरी कम देना परिग्रह ही हैं असंग्रह या अपरिग्रह को आन्दोलन के रूप में चलाना चाहिए, लेकिन इसे अहिंसा- आन्दोलन का ही एक अंग मानना श्रेयस्कर हैं।

आचार्य महाप्रज्ञ ने महावीर के अनेकान्तवाद के सिद्धान्त को सापेक्षवाद और सह-अस्तित्व से जोड़कर मैत्री, अभय तथा सहिष्णुता के तीन समतामय आयामों के धरातल पर अभिव्यंजित किया है। आचार्यश्री ने बात-बात में जैन-दर्शन की गहन, सूक्ष्म गुत्थियों को सुलझाने का अच्छा प्रयास किया है। मुक्तमानसः मुक्तद्वार में पंचास्तिकाय का निरूपण है। दर्शन की यह चर्चा जटिल नहीं।

महावीर को सर्वज्ञ, सर्वदर्शी मानते हुए उन्हें विचार और व्यवहार दोनों दृष्टियों से समन्वयवादी माना है। उन्होंने समन्वय के बोध को सत्य का बोध कहा है। उनका समन्वय वस्तु-जगत के धरातल पर बौद्धिक है और प्राणी-जगत् के धरातल पर अहिंसक है। इसी आधार पर उन्होंने दूसरे मतवादों, सिद्धान्तों को समन्वित करने की चेष्टा की। वेदान्त का अद्वैतवाद जैन-दर्शन का संग्रह-नय है चार्वाक के भौतिक दृष्टिकोण को जैन-दर्शन का शब्द व्यवहार-नय माना है। बौद्धों का पर्यायवाद जैन दर्शन का ऋजुसूत्र- नय है। वैयाकरणों का शब्दाद्वैत जैन दर्शन का शब्द नय है। इस प्रकार जैन-दर्शन ने विभिन्न दृष्टिकोणों की सत्यता स्वीकृत की और उन्हें समन्वय के सूत्र में अनुस्यूत करने की कोशिश की। महावीर को अस्तित्ववादी मानकर भी अद्वैत और द्वैतवादी से पृथक नहीं माना। उनकी अहिंसा अभेदानुभूति के आधार पर अस्तित्ववाद के निकट ही है, उससे पृथक नहीं। व्यक्तित्व के धरातल पर महावीर, संघशास्ता, धर्म-व्याख्याता और पथ-प्रवर्तक है। उनकी जीवन-यात्रा व्यक्तित्व से अस्तित्व की ओर जाती है। यदि हम बुद्ध को बहुजन-हिताय को लेकर चलने वाला माने तो महावीर को सर्वजन-हिताय को लेकर चलने वाला माना जा सकता है। महावीर ने यह रहस्य भी समझाया कि सत्य, सत्य है, वह किसी व्यक्ति के परिनिरूपण से सत्य नहीं बनता। दूसरे यह भी कि व्यक्ति, व्यक्ति ही नहीं, वह चैतन्य तथा सत्य का आलोक-पुंज भी है।

पुस्तक में बौद्ध-साहित्य में महावीर शीर्षक से जो एक प्रकरण है, उसके विषय-प्रतिपादन में विशदता, गहनता, ऐतिहासिकता, सामग्री की यथेष्टता नहीं। इस विषय पर बहुत कुछ लिखा जा सकता था और यह पाठकों के लिए अधिक ज्ञान-वर्धक भी होता। इतना कहने से कि बौद्ध-पिटकों में महावीर की कटु आलोचना की गई या महावीर ने मधुकरी-वृत्ति का प्रतिपादन किया जो बौद्धों में प्रचलित नहीं थी-काफी नहीं, महावीर और बुद्ध दोनों समकालीन थे, उनके युग की, साहित्य की ज्ञानकी, दर्शन की, तुलनात्मक चर्चा अपेक्षित थी।

निर्वाण नामक प्रकरण में लेखक ने स्वास्थ्य के तीन लक्षण बतलाये हैं- १. आहार-संयम, २. शरीर और आत्मा के भेद-विज्ञान की सिद्धि, ३. राग-द्वेष ग्रन्थि का विमोचन। इन लक्षणों के आधार पर शारीरिक और मानसिक दोनों ही प्रकार के रोगों का परिशमन किया जा सकता है। तनाव और बिखराव से अभ्याक्रान्त इस युग में स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिए इनसे अच्छे और क्या नियम-लक्षण हो सकते हैं?पुस्तक के ४८ वें प्रकरण जीवन का विहंगावलोकन में महावीर के कर्तव्य, तप-ध्यान, मौन, निद्रा, समत्व-प्रेम, आहार, अध्यात्म आदि पर विभिन्न पुस्तकों से उद्धरण सानुवाद दिये हैं।

पाठकों के लिए यह उपयोगी सामग्री है।

ग्रन्थ का परिशीलन करने पर यह स्पष्ट विदित होता है कि विद्वान लेखक को महावीर के युग की विभिन्न प्रकार की सामाजिक समस्याओं का अच्छा ज्ञान है। अनेक स्थानों पर भिन्न-भिन्न प्रकरणों में तत्-युगीन रीति-रिवाजों प्रथाओं आदि पर सम्यक प्रकाश डाला गया है। इनमें हमें तत्कालीन संस्कृति का भी ज्ञान प्राप्त हो जाता है उन दिनों दास-प्रथा का जोर था, इसका ब्यौरा चन्दना के प्रसंग में मिलता है। इसके अतिरिक्त एक बार राजकुमार महावीर उद्यान- क्रीड़ा को जा रहे थे तो उन्हें एक दास का करुण-क्रन्दन सुनाई पड़ा, जिसे उसका स्वामी पीट रहा था। दूसरे

उस समय नौका-विहार किया जाता था। स्वयं महावीर ने कई बार गंगा, नौका द्वारा पार की। इससे ज्ञात होता है कि नौका बनाने की कला, नौका-विहार करने की रुचि उन दिनों लोगों में कितनी अधिक थी। एक प्रसंग आदिवासी जाति के विषय में आया है, जिसमें वर्णित है कि आदिवासी घास के आवरण ओढ़ते थे, कपास नहीं होती थी, भोजन घी-तेल रहित प्रयोग करते थे, भोजन में अम्लरस के साथ ठंडा भात खाते थे, नमक नहीं होता था, मध्याह के भोजन में रूखा चावल और मांस खाया जाता था। गाली देना, मारपीट करना उनमें साधारण बात थी। बहुपत्नी-विवाह उन दिनों प्रचलित था। जलाशय का पानी पिया जाता था, परन्तु महावीर ने उसका निषेध किया। चोरी करने की बुरी आदत भी उस युग में थी। वारिषेण के राजगृह में विद्युत नामक चोर का उल्लेख किया गया है। वह छद्मवेष धारण कर अन्तःपुर से हार चुरा कर भाग गया था। यहीं इस बात का भी पता चला कि नगर वधू या वेश्यावृति भी उस युग में पाई जाती थी। धर्म-परिवर्तन भी उन दिनों लोग करते थे। वह युग जादू-टोने, चमत्कारी क्रियाएं करने, भविष्यवाणी करने, योग-शक्ति का प्रदर्शन करने के लिए भी प्रसिद्ध था। तस्कर रोहिणेय के पास गगन-गामिनी पादुकाएं थीं और वह रूप परिवर्तिनी-विद्या जानता था। उसने शालिग्राम की जनता पर जादू भी कर रखा था। गोशालक ने अपने तप-तेज से महावीर के दो साधुओं को भस्म कर दिया था। वैश्यायन तपस्वी ने गोशालक पर तैजस शक्ति का प्रयोग किया। महावीर भी योग-शक्तियों के परम ज्ञाता तथा प्रयोक्ता थे।

पुस्तक में सभी प्रकार की बातें, किसी प्रसंग, घटना, कथा से सम्बद्ध है। कुछेक प्रसंग तथा कथाएं बड़ी ही रोमांचकारी हैं इनमें मेघकुमार के पूर्व-भवों का वर्णन वारिषेण का चोरी के अपराध में वध का प्रयत्न गोशालक द्वारा लालची व्यक्तियों की कथा आदि उल्लेखनीय है। इनमें उस युग की चमत्कार-प्रियता का, अति प्राकृतिक तत्वों में आस्था का पता भी चलता है।

आचार्य महाप्रज्ञ प्रकृति के पुजारी हैं। उन्होंने श्रमण महावीर में कई-एक स्थानों पर प्रकृति की सुषमा का भिन्न-भिन्न रूपों में चित्रण किया है। यहां एक-दो चित्रों को प्रस्तुत करना न्याय-संगत होगा। संध्या का वर्णन करते हुए लेखक कहता है- सूरज पश्चिम की घाटियों के पार पहुंच चुका था। रात ने अपनी बाहें फैला दी। तमस् ने भूमि के मुंह पर श्यामल घूंघट डाल दिया। प्रातः काल का वर्णन देखिए- नवोदित सूर्य की रश्मियां व्योमतल में तैरती हुई धरती पर आ रही है तिमिर का सघन आवरण खण्ड-खण्ड होकर शीर्ण हो रहा है। वर्षा के एक-दो चित्र भी अवलोकनीय हैं।

श्रमण महावीर की भाषा प्रसाद-गुण से युक्त अत्यन्त प्राञ्जल है। वह भावों की परतों को खोलने में सक्षम है। लेखक ने यथावश्यक अन्य ग्रन्थों से उदाहरण भी दिये हैं और एक-दो स्थानों पर गीतों की योजना भी दर्शनीय है। इससे ज्ञात होता है कि लेखक को कवि-हृदय प्राप्त है, तभी तो इस ग्रन्थ की भाषा में कवित्वमय शैली के दर्शन होते हैं। लेखक ने दार्शनिक शब्दावली के अतिरिक्त कुछ अप्रचलित शब्दों का प्रयोग भी इस पुस्तक में किया है, जैसे सद्यस्क, कजावा, शकटिका, हलद्दुक आदि। कुछेक सूक्तियां अवश्य सुन्दर है और मुहावरे के रूप में प्रयुक्त होने की क्षमता रखती है।

ध्यान है वर्तमान में जीने की कला

❁ साध्वी राजीमती जी

मनुष्य ने अनंत जन्मों में बहुत कुछ सीखा है, परन्तु समय के साथ जीना नहीं सीखा। समय की सूई को नहीं पहचाना। समय सरकता है और हम फिसलते हैं। इस फिसलन ने हमें कभी आगे तो कभी पीछे धकेला है। समय में जीया जा सकता है, परन्तु ठहरा नहीं जा सकता।

आगे का अर्थ है- भविष्य और पीछे का अर्थ है- अतीत।

वर्तमान आते ही पैर सरक जाते हैं, जबकि बदलने के लिए ठहरना जरूरी है। किंतु मूर्च्छा का भाव अतीत को छोड़ने नहीं देता। स्मृति यदा पीछा करती है जो किसी के पीछे दौड़ता है वह चित्त दौड़ते-दौड़ते दुर्बल हो जाता है।

दुर्बल चित्त कभी सत्य को नहीं पा सकता।

आज का राजा जो आज नहीं, वह कभी नहीं।

रस्किन ने पेपरवेट पर क्या लिखूं, यह सोचते-सोचते, खोजते-खोजते अंत में एक शब्द-लिखा- आज के सिवाय दुनिया के सारे शब्द मृत होते हैं। इसलिए कहा जा सकता है कि ध्यान वर्तमान में जीने की कला सिखाता है।

ध्यान इस विश्वास के साथ शुरू करना चाहिए कि जीवन का यही क्षण मूल्यवान है और मुझे इसे जीभर कर जीना है। ध्यानी सदा वर्तमान में रहता हैं उसे न कल्पना की जरूरत है और न उपयोग करने के लिए उसकी स्मृति की। जो खाया-पिया, किया-कराया, सोचा-विचारा वह अतीत के पर्दे के पीछे चला गया। उसकी स्मृति से लाभ भी क्या?

ध्यान के क्षणों में सिर्फ वर्तमान सच होता है।

अपनी सारी कमी को एक साथ न छोड़ सको तो
एक-एक कमी को दूर करने का प्रयास करो। - आचार्य महाश्रमण

श्रद्धावनत

प्रकाश प्रमोद बैद

लाडनूं - कोलकाता

ध्यान-साधना की आवश्यकता

डॉ. सागरमल जैन

मानव मन स्वभावतः चंचल माना गया है। उत्तराध्ययन सूत्र में मन को दुष्ट अश्व की संज्ञा दी गई, जो कुमार्ग में भागता है। गीता में मन को चंचल बताते हुए कहा गया है कि उसको निग्रहीत करना वायु को रोकने के समान अति कठिन है। चंचल मन में विकल्प उठते है इन्हीं विकल्पों के कारण चैत्तसिक अशान्ति का जन्म होता है। यह आकुलता ही चेतना में उद्विग्नता या तनाव की उपस्थिति की सूचक है। चित्त की यह उद्विग्न या तनावपूर्ण स्थिति ही असमाधि या दुःख है। इसी चैत्तसिक पीड़ा या दुःख से विमुक्ति पाना समग्र आध्यात्मिक साधना पद्धतियों का मूलभूत लक्ष्य है। इसे ही निर्वाण या मुक्ति कहा गया है।

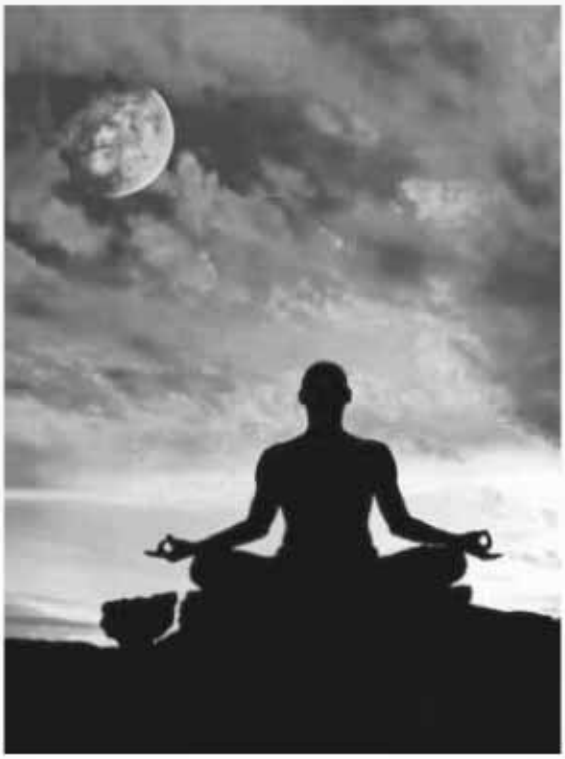

मनुष्य में दुःख-विभूक्ति की भावना सदैव ही रही है। यह स्वाभाविक है, आरोपित नहीं है। क्योंकि कोई भी व्यक्ति तनाव या उद्विग्नता की स्थिति में जीना नहीं चाहता है। उद्विग्नता चेतना की विभावदशा है। विभावदशा से स्वभाव में लौटना यही साधना है। पूर्व या पश्चिम की सभी अध्यात्म प्रधान साधना विधियों का लक्ष्य यही रहा है कि चित्त को आकुलता, उद्विग्नता या तनावों से मुक्त करके, उसे निराकुल, अनुद्विग्न चित्तदशा या समाधिभाव में स्थित किया जाये। इसके लिये साधना विधियों का लक्ष्य निर्विकार और निर्विकल्प समता युक्त चित्त की उपलब्धि ही है। इसे ही समाधि सामायिक (प्राकृत समाहि) कहा गया है। ध्यान इसी समाधि या निर्विकल्प चित्त की उपलब्धि का अभ्यास है। यही कारण है कि वे सभी साधना पद्धतियां जो चित्त को अनुद्विग्न, निराकुल, निर्विकार और निर्विकल्प या दूसरे शब्दों में समत्व-युक्त बनाना चाहती है, ध्यान को अपनी साधना में अवश्य स्थान देती है।

ध्यान का स्वरूप एवं प्रक्रिया

जैनाचार्यों, ने ध्यान को 'चिन्तानिरोध' कहा है। चिन्ता का निरोध हो जाना ही ध्यान है। दूसरे शब्दों में यह मन की चंचलता को समाप्त करने का अभ्यास है। जब ध्यान सिद्ध हो जाता है तो चित्त की चंचलता स्वतः ही समाप्त हो जाती है। योगदर्शन में 'योग' को परिभाषित करते हुए भी कहा गया है कि चित्तवृति का निरोध की 'योग' है। स्पष्ट है कि चित्त की चंचलता की समाप्ति या चित्तवृत्ति का विरोध ध्यान से ही सम्भव है। अतः ध्यान को साधना का आवश्यक अंग माना गया है।

गीता में मन की चंचलता के निरोध को वायु को रोकने के समान अति कठिन माना गया है। उसमें उसके निरोध के दो उपाय बताते गये है १. अभ्यास और २. वैराग्य। उत्तराध्ययन मे मन रूपी दुष्ट अश्व को निग्रहीत करने के लिये श्रुत रूपी रस्सियों का प्रयोग आवश्यक बताया गया है। चंचलित की संकल्प-विकल्पात्मक तरंगे या वासनाजन्म आवेग सहज ही समाप्त नहीं हो जाते है। पहले उतनी भाग-दौड़ को समाप्त करना होता है। किन्तु यह वासनोन्मुख सक्रिय-मन या विक्षोभित चित्त निरोध के संकल्प मात्र से नियन्त्रित नहीं हो पाता है। पुनः यदि उसे बलात् रोकने का प्रयत्न किया जाता है तो वह अधिक विक्षुब्ध होकर मनुष्य को पागलपन के कगार पर पहुंचा देता है जैसे तीव्र गति से चलते हुए वाहन को यकायक रोकने का प्रयत्न भयंकर दुर्घटना का ही कारण बनता है, उसी प्रकार चित्त की चंचलता का यकायक निरोध विक्षिप्तता का कारण बनता है। प्रथमतः मानव मन की गतिशीलता को नियंत्रित कर उसकी गति की दिशा बदलनी होती है। ज्ञान या विवेकरूपी लगाम के द्वारा उस मन रूपी दुष्ट अश्व को कुमार्ग से सन्मार्ग की दिशा में मोड़ा जाता है। इससे उसकी सक्रियता यकायक समाप्त तो नहीं होती, किन्तु उसकी दिशा बदल जाती है। ध्यान में भी यही करना होता है। ध्यान में सर्व प्रथम मन को वासना रूपी विकल्पों से जोड़कर धर्म-चिन्तन में लगाया जाता है फिर क्रमशः इस चिन्तन की प्रक्रिया को शिथिल या क्षीण किया जाता है। अन्त में एक ऐसी स्थिति आ जाता है जब मन पूर्णतः निष्क्रिय हो जाता है, उसकी भागदौड़ समाप्त हो जाती है। ऐसा मन, मन न रहकर 'अमन' हो जाता है। मन को 'अमन' बना देना ही ध्यान है।

इस प्रकार चैत्तासिक तनावों या विक्षोभों को समाप्त करने के लिए अथवा निर्विकल्प और शान्त चित्त की उपलब्धि के लिए ध्यान साधना आवश्यक है। उसके द्वारा संकल्प-विकल्पों में विभक्त चित्त को केन्द्रित किया जाता है। विविध वासनाओं, आकांक्षाओं और इच्छाओं के कारण चेतना-शक्ति अनेक रूपों में विखण्डित होकर स्वतः में ही संघर्षशील हो जाती है। उस शक्ति का यह विखराव ही हमारा आध्यात्मिक पतन है। ध्यान इस चैत्तसिक विघटन को समाप्त कर चेतना को केन्द्रित करता है। चूंकि वह विघटित चेतना को संगठित करता है इसलिये वह योग (unfification) है। ध्यान चेतना के संगठन की कला है। संगठित चेतना ही शक्ति स्रोत है, इसलिये यह माना जाता है कि ध्यान से अनेक आत्मिक लब्धियां या सिद्धियां प्राप्त होती है।

चित्तधारा जब वासनाओं एवं आकांक्षाओं के मार्ग से बहती है तो वह वासनाओं, आकांक्षाओं, इच्छाओं की स्वाभाविक बहुविधता के कारण अनेक धाराओं में विभक्त होकर निर्बल हो जाती है। ध्यान इन विभक्त एवं निर्बल चित्तधाराओं को एक दिशा मे मोड़ने का प्रयास है। जब ध्यान की साधना या अभ्यास से चित्तधारा एक दिशा में बहने लगती है, तो न केवल वह सबल होती है, अपितु नियंत्रित होने से उसकी दिशा भी सम्यक् होती है। जिस प्रकार बांध विकीर्ण जलधाराओं को एकत्र कर उन्हें सबल और सुनियोजित करता है, उसी प्रकार ध्यान भी हमारी चेतनधारा को सबल और सुनियोजित करता है। जिस प्रकार बांध द्वारा सुनियोजित जल-शक्ति का सम्यक् उपयोग सम्भव हो पाता है, उसी प्रकार ध्यान द्वारा सुनियोजित चेतनशक्ति का सम्यक् उपयोग सम्भव है।

संक्षेप में आत्मशक्ति के केन्द्रीकरण एवं उसे सम्यक् दिशा में नियोजित करने के लिए ध्यान साधना आवश्यक है। वह चित्त वृत्तियों की निरर्थक भागदौड़ को समाप्त कर हमें मानसिक विक्षोभों एवं विकारों से मुक्त रखता है। परिणामतः वह आध्यात्मिक शान्ति और निर्विकल्प चित्त की उपलब्धि का अन्यतम साधन है।

प्रेक्षा-विचारक

काय-सिद्धि से भाव शुद्धि

❁ साध्वी कनकश्री जी

मनुष्य का व्यक्तित्व अनेक पर्तों से निर्मित हैं इन पर्तों के पार जाने के लिए सम्यक् बोध आवश्यक है। मानवीय व्यक्तित्व के मुख्यतः तीन स्तर है- स्थूल शरीर, सूक्ष्म शरीर और सूक्ष्मतम शरीर।

स्थूल शरीर और हमारा व्यक्तित्व

सप्त धातुमय शरीर स्थूल शरीर है। यह भोजन से निर्मित है। भोजन केवल जीवन चलाऊ ही नहीं होता, वह हमारे व्यक्तित्व की एक परत भी बनता हैं मां-बाप के बीजाणु से निर्मित यह स्थूल शरीर कितने पेड़-पौधों, खनिजों, पवन, पानी और पावक-पदार्थों की यात्रा करता हुआ विकसित होता है। मनुष्य के व्यक्तित्व में रूप-रंग, स्वभाव आदि जो भी प्रकट होता है, वह बीजाणु में निहित होता है। भोजन उसके विकास और ह्रास का निमित्त बनता है। हमारी योग्यता, स्वास्थ्य, मनोबल, धृतिबल, भावी संभावनाएं- ये सब भोजन पर आधारित हैं। शरीर के वजन से सात सौ गुना अधिक खाद्य-पेय पदार्थों का सेवन कर लेते हैं। सात वर्ष में हमारा पूरा शरीर बदल जाता है। ७० वर्ष तक हमारा दस बार कायाकल्प हो जाता है। जो भी खाते हैं, वह कुछ ही घंटों में हमारे व्यक्तित्व में बदल जाता है। क्रूरता-करुणा, क्रोध-लोभ ये वृत्तियां भोजन के माध्यम से ही हमारे रक्त में प्रविष्ट होती हैं भारतीय मनीषियों ने भोजन के सम्बन्ध में बहुत गंभीरता से सोचा-विचारा और ग्रंथ के ग्रंथ रच दिए। उनके द्वारा प्रस्तुत भोजन-विज्ञान आज एक जीवन-दर्शन के रूप में विकसित हो रहा है।

भोजन विवेक और काय-सिद्धि

आहार स्वस्थ भी होता है, अस्वस्थ भी। शुद्ध भी होता है, अशुद्ध भी। जो भोजन हमारी अंतर्यात्रा में बाधक बनता है, हमें भीतर जाने ही नहीं देता, चैतन्य का स्पर्श भी नहीं करने देता, जो भीतर में अशांति और बेचैनी उत्पन्न करता है, वह अशुद्ध है। घर की दीवार ठोस पत्थर की भी होती है, लकड़ी की भी होती है और शीशे की भी होती है। जो भोजन अध्यात्म साधना में बाधक नहीं बनता, शरीर को पारदर्शी-ट्रान्सपेरेन्ट और निर्मल बनाता है, वह शुद्ध और सात्विक है। जिस भोजन से भीतर की झलक मिल सके वह सात्विक है, शेष असात्विक है। जो भोजन शरीर की मांग को पूरा करता है, ऊर्जा देता है और साथ में पागलपन, नशा या विलास नहीं देता, वह सात्विक भोजन है।

शाकाहार जहां सात्विक भोजन की गणना में आता है, वहां मांसाहार तामसिक भोजन माना गया है। वैज्ञानिक प्रयोगों/परीक्षणों ने यह सिद्ध कर दिया है कि शाकाहारी प्राणी के शरीर की मांसपेशियों में जो लोच होता है, वह मांसाहारी के शरीर में नहीं होता। मांस पशु-शरीर की निर्मिति है। उसे खाने से मनुष्य-शरीर में धीरे-धीरे जानवरों जैसी व्यवस्था होने लगती है। पशु-संस्कार पुष्ट होते हैं और बुद्धि क्षीण होने लगती है। इसके विपरीत पीढ़ी-दर-पीढ़ी हजारों वर्षों तक यदि शाकाहार का प्रयोग चलता रहे तो जीन और क्रोमोसोम के स्तर तक अद्भुत परिवर्तन घटित हो सकता है। एक नये आदमी का जन्म हो सकता है।

नशीली और मादक वस्तुओं का सेवन भी शरीर में जड़ता और चित्त में तमोगुण उत्पन्न करता है। वह चित्त- चेतना के आगे कंकरीट की दीवार खड़ी कर देता है। आदमी विवेक भ्रष्ट एवं बुद्धिहीन बन जाता है।

महात्मा सरयूदास ने धनिक द्वारा आयोजित वृहद् भोज में सम्मिलित होने की स्वीकृति प्रदान की। यथासमय भोज में पहुंचे। अपने साथ वे दो बाजरे की रोटियां लेकर गये थे। पांत में बैठे। विविध पकवान आये, कसार आया, पर सरयुदासजी ने स्वीकार नहीं किया। सेठ चिंतित हो उठा। कहीं संत नाराज तो नहीं हो गये? पूछा- किसी चीज की कमी रह गई क्या?नहीं, नहीं कमी की कोई बात नहीं है- कहते हुए महात्मा ने एक दर्पण मंगाया। उस पर कसार घिसा। दर्पण धुंधला हो गया। उस पर रोटी घिसी दर्पण चमक उठा। सरयूदासजी ने बोध की भाषा में कहा- देखो! ऐसे ही गरिष्ठ भोजन से हमारी चेतना का दर्पण मलिन हो जाता है। सात्विक भोजन से उस पर रौनक-चमक आ जाती है।

विशिष्ट शक्तिअर्जन, स्वास्थ्य और दीर्घायुष्य के लिए भी स्थूल शरीर को साधना नितान्त अपेक्षित है। लौकिक जीवन में किसी भी कार्यक्षेत्र में सफल होने के लिए जैसे अक्षर ज्ञान और अंक गणित को सीखना जरूरी है, वैसे ही अस्तित्व की सफल अभिव्यक्ति के लिए काय-सिद्धि अनिवार्य है। उसके उपाय हैं- इन्द्रिय संयम, उचित आहार, नियमित व्यायाम या योगासन। आध्यात्मिक शक्तियों के विकास के लिए शरीर को सेवा उपासना, तपोयोग आदि सत्कर्मों में नियोजित करना अपेक्षित है।

सूक्ष्म शरीर को साधें, तेजस्वी बनें

हमारा ऊर्जामय शरीर अपेक्षाकृत सूक्ष्म है। आधुनिक विज्ञान की भाषा में यह प्राणिक शरीर, दि इनर्जी बॉडी या वाइटल बॉडी के नाम से पहचाना जाता है। योग-दर्शन में प्राणमय कोष और जैन-दर्शन की भाषा में यह तैजस-शरीर कहलाता है। प्राण का अर्थ है जीवन तत्व, जीवनी शक्ति। उसका उद्गम स्रोत यह तैजस शरीर ही है। मनः संस्थान का विकास भी प्राण-शरीर का ही एक अंग है।

दूसरी कीमती चीजें यदि खो जाए तो उन्हें दुबारा प्राप्त किया जा सकता है।
किन्तु समय एक ऐसी चीज है जिसे खोने के बाद, दुबारा कभी नहीं पाया जा सकता।।
- आचार्य महाश्रमण

श्रद्धावनत

श्रीमती सायर-हीरालाल मालू
(सुजानगढ-बैंगलोर)

व्यवसाय-व्यवहार योग्य बुद्धि सामान्यतः सबके पास होती है किन्तु परिष्कृत दृष्टिकोण, पारदर्शी विवेक, प्रज्ञामयी प्रतिभा एवं अतीन्द्रिय चेतना का जागरण असामान्य घटना है। इसके लिए सूक्ष्म शरीर को निर्मल एवं शक्तिशाली बनाना आवश्यक है। यह स्थिति राग-द्वेष, हर्ष विषाद, लिप्सा-लालसा, अहमन्यता-महत्वाकांक्षा आदि अभिप्रेरणाओं से ऊपर उठने से प्राप्त होती है। इससे कल्पना शक्ति, विचार शक्ति और निर्णय शक्ति का विकास होता है। स्वाध्याय, सत्संग, चिंतन-मनन आदि का आलम्ब लेकर तैजस शरीर को पवित्र बनाया जा सकता हैं यथार्थवादी दृष्टिकोण और जागृत विवेक के आधार पर साधारण व्यक्ति भी असाधारण मेधा का स्वामी बन सकता हैं आचारांग के अनुसार मेधावी वह है जो अनुशासननिष्ठ है। आत्मानुशासन से प्राण शक्ति प्रखर होती है। सूक्ष्म शक्तियां जागृत/संवर्धित होती हैं।

सकारात्मक सोचें

प्राण शक्ति को प्रखर बनाने के लिए निषेधात्मक भावों, विचारों से बचें। इससे जीवनी शक्ति क्षीण होती है। निषेधात्मक भाव जहर से भी अधिक हानिकारक है। वे मजबूत शरीर को भी तोड़ देते हैं। नकारात्मक चिंतन तनाव उत्पन्न करता है इससे अम्ल की मात्रा अधिक उत्पन्न होने से उत्तेजना बढ़ती है। यह जीवनी शक्ति, प्राण शक्ति को क्षति पहुंचाती है। क्रोध प्राणनाशक शत्रु है। उसे अनेक मुखों वाला नाग या तेज धार वाली तलवार से उपमित किया जाता है। यह तप, संयम, दान आदि के फलों को भी नष्ट कर देता है। डिजरायली ने अनुभव के स्वर में कहा- दोस्त! यदि तुम अपना स्वास्थ्य खराब करना चाहते हो तो नशे पर पैसा खर्च मत करो, केवल अपने को गुस्से से भरे रखो, गुस्सा तुम्हारे रक्त में इतना विकार पैदा कर देगा कि वह जहरीला हो जाएगा। कोप, दुर्भाव, ईर्ष्या, प्रतिशोध की भावना- ये विवेक को टेढ़ा कर देते हैं। शत्रुता का भाव अपने आस-पास अनेक शत्रु खड़े कर देता है।

ईर्ष्या की वृत्ति भी बहुत कष्टकर होती है। किसी के घर फूल भी खिलता है तो पड़ौसी को जुकाम हो जाता है। यह असहिष्णुवृत्ति है।

एक प्रौढ़ महिला का पति ए वन है, आमदनी बढ़िया है। बहू-बेटे बाहर रहते हैं। घर का काम नौकर संभालते हैं। किसी प्रकार की तकलीफ नहीं, चिंता का कोई कारण नहीं, फिर भी सदा बीमार, निरंतर डॉक्टरों का चक्कर! कारण निषेधात्मक विचार। विचारों से उत्पन्न रोगों की चिकित्सा सामान्यतः कोई डॉक्टर नहीं कर सकता। ये निषेधात्मक विचार न केवल शरीर को रुग्ण बनाते हैं, अपितु जीवनी शक्ति को भी क्षीण करते हैं। भीतर में बिलौना चलता है तो छींटे आस-पास उछलते ही हैं। तनाव, चिंता, गुस्सा, चिड़चिड़ापन - इनसे शरीर की सभी मांसपेशियां एक साथ प्रभावित होती है। इससे बचने के लिए सकारात्मक सोच की अहं भूमिका रहती है। प्राणायाम, दीर्घश्वास प्रेक्षा, समवृत्ति श्वास-प्रेक्षा के अभ्यास से स्थूल शरीर स्वस्थ बनता है, साथ ही तैजस शरीर भी शक्तिशाली एवं दीप्तिमान बनता है।

संस्कारों का पुंज कर्म शरीर

तैजस शरीर से परे एक सूक्ष्मतम शरीर और है, जैन सिद्धांत के अनुसार उसे कर्म शरीर कहते हैं। यह जन्मजन्मांतरों से संचित शुभाशुभ कर्म पुद्गलों से निर्मित है। योग-शास्त्र के अनुसार इसे कारण शरीर भी कहते हैं। यह जीन क्रोमोसोम व गुणसूत्रों से भी अधिक सूक्ष्म है। अपरिमित संस्कारों का संवाहक होने के कारण यह संस्कार शरीर के रूप में भी पहचाना जाता है। यह भावनाओं, संवेदनाओं, वृत्तियों व अभिवृत्तियों का क्षेत्र है। यह जितना पवित्र, पारदर्शी और विरल होता है, व्यक्ति उतना ही अधिक आस्थावान, संवेदनशील, धर्मपरायण और संयमरत बनता है इसी के आधार पर जागतिक विराट सत्ता या परम तत्व के साथ उसके संबंध जुड़ते है। ज्ञान-विज्ञान व अनुभवों के आदान-प्रदान के द्वार खुलते हैं। ध्यान धारणा, संयम, तप इत्यादि के द्वारा संचित संस्कारों का जब परिष्कार होता है, आत्मा की ईंधन परमात्मा की अग्नि को समर्पित होकर तद्रुप बन जाती है। संस्कार शरीर में ही भावनाएं, मान्यताएं, आस्थाएं, आकांक्षाएं, उगती है, पुष्ट होती है। इन्हें यदि करुणा, सेवा, सहकारिता आदि से भरा-पूरा रखा जाए तो मानवीय व्यक्तित्व में देवत्व को उभारा जा सकता है।

अस्तित्व से व्यक्तित्व तक की महायात्रा

प्रत्येक व्यक्ति की कोशिश रहती है वह आकर्षक और प्रभावी व्यक्तित्व का स्वामी बने। इसके लिए मात्र सुगठित शरीर या सुंदर चेहरा ही पर्याप्त नहीं है, वह आकर्षक बनता है ऊंचे चरित्र से, सुंदर भावों से और स्वस्थ विचारों से। व्यक्तित्व निर्माण में विचारों की भूमिका प्रमुख रहती है। विचार हमारे तीनों शरीरों को प्रभावित करते हैं। परामनोविज्ञान का निष्कर्ष है- सोचना मात्र ब्रेन का ही काम नहीं है। हमारा पूरा शरीर सोचता है, पूरा शरीर उन-उन विचारों से प्रभावित होता है। अस्वस्थ विचार मस्तिष्क में व्याधि की प्रतिमा निर्मित करते हैं। वह चित्र क्रमशः अस्थि, स्नायु, श्वसन तंत्र, रक्त संचार प्रणाली और पाचन तंत्र को प्रभावित करता है। हम प्रसन्न होते हैं तो हमारी नस-नाड़ियां खिल उठती हैं। हम उदास होते हैं तो पूरा स्नायु तंत्र उदास- शिथिल हो जाता है। हमारी भावनाएं स्वस्थ प्रसन्न रहें। मन उल्लास-उत्साह से भरा रहे। इससे चेहरा तेजस्वी बनता है, आंखों में चमक आती है। इसके विपरीत चिंताओं में डूबे, हीनभावनाओं से घिरे, हताश- निराश व्यक्ति का चेहरा बुझा-बुझा, कांतिहीन प्रतीत होता है। झुका हुआ सिर, धंसी हुई आंखें, मरियल-सी चाल एक सुंदर चेहरे को भी दयनीय बना देती हैं सकारात्मक सोच और पवित्र अंतःकरण वाला व्यक्ति चेहरे से सुंदर न भी हो, उसके व्यक्तित्व की गरिमा, आभा और प्रभावोत्पादकता दूसरी ही होती है। अतः यदि अपने व्यक्तित्व को श्रेष्ठता प्रदान करना है तो स्थूल शरीर से प्रारंभ कर सूक्ष्म और सूक्ष्मतम शरीर को शुद्ध करें, सिद्ध करें। चैतन्य के साथ संपर्क होगा। राग-द्वेष क्षीण होंगे। ज्ञाता-द्रष्टा भाव जागेगा। आंतरिक अर्हताएं प्रकट होंगी। यही है अस्तित्व बोध से समग्र व्यक्तित्व विकास की महायात्रा। यही है स्वयं के सम्यक् निर्माण की प्रक्रिया। आचार्य श्री महाप्रज्ञ द्वारा निर्दिष्ट प्रेक्षा-अनुप्रेक्षा के वैज्ञानिक प्रयोगों के साथ इसी क्षण शुरू करें यह महायात्रा।

प्रबल पुण्य का उदय है तो, कोई तुम्हें मार नहीं सकता और
प्रबल पाप का उदय है तो कोई तुम्हें बचा नहीं सकता।
तुम्हारे सुख-दुःख के जिम्मेवार तुम स्वंय हो। - आचार्य महाश्रमण

श्रद्धावनत

मंगलचंद मनोजकुमार लूणियां

(चाड़वास-शिलोंग)

प्रेक्षा फांउडेशन संबद्धता प्राप्त केन्द्र सूची

संबद्धता क्रमांक	केन्द्र का नाम	स्थान का नाम	समन्वयक का नाम	सम्पर्क सूत्र	केन्द्र श्रेणी
ए/001	तुलसी अध्यात्म नीडम	लाडनूं	डा. विजयश्री शर्मा	8233344482	ए
ए/002	अध्यात्म साधना केन्द्र	मैहरोली	श्री मुकेश कुमार	9643300655	ए
ए/003	प्रेक्षा विश्व भारती	कोबा	श्री बाबूलाल सेखानी	9825033201	ए
बी/001	प्रेक्षाध्यान केन्द्र	कूचबिहार	श्री जयचंद दुगड़	9434213099	बी
बी/002	सौराष्ट्र मेडिकल एण्ड एजुकेशनल ट्रस्ट	राजकोट	श्री चन्द्रकान्त कोटेचा	9824043363	बी
बी/003	प्रेक्षा प्रकोष्ठ	चेन्नई	श्री माणिकचंद रांका	9440205427	बी
बी/004	महाप्रज्ञ प्रेक्षाध्यान केन्द्र	नागपुर	श्री आनंदमल सेठिया	9373471831	बी
सी/001	प्रेक्षाध्यान केन्द्र	अम्बाबाड़ी	श्री संतोष सुराणा	9426087220	सी
सी/002	प्रेक्षाध्यान केन्द्र	इन्दौर	श्री राजेन्द्र मोदी	9993465883	सी
सी/003	प्रेक्षाध्यान केन्द्र	सूरत	श्री जयन्तीलाल कोठारी	9377555545	सी
सी/004	प्रेक्षाध्यान केन्द्र	विक्रोली	श्री मिश्रीमल चौधरी	9869990868	सी
सी/005	प्रेक्षाध्यान योग साधना केन्द्र	कांदीवली	श्री पारसमल दुगड़	9004937723	सी
सी/006	प्रेक्षाध्यान योग साधना केन्द्र (महिला)	कांदीवली	श्रीमती निर्मला दुगड़	9004798179	सी
सी/007	प्रेक्षाध्यान योग साधना केन्द्र	दामोदरवाड़ी, कांदीवली	श्री पारसमल दुगड	9004937723	सी
सी/008	प्रेक्षाध्यान योग साधना केन्द्र	अशोकनगर कांदीवली	श्री पारसमल दुगड	9004937723	सी
सी/009	अर्हम प्रेक्षाध्यान योग केन्द्र	गौहाटी	श्री निर्मल चौरड़िया	9435042723	सी
सी/0010	प्रेक्षाध्यान केन्द्र	रायपुर	श्री सुरेन्द्र ओसवाल	9425285121	सी
सी/0011	प्रेक्षाध्यान केन्द्र	चेन्नई	श्रीमती प्रियंका बोहरा	9840845337	सी
सी/0012	प्रेक्षाध्यान केन्द्र	बैंगलोर	श्रीमती पुष्पा गन्ना	9686366250	सी
बी/005	प्रेक्षाध्यान केन्द्र, आचार्य तुलसी शंति प्रतिष्ठान	गंगाशहर	श्री जैन लूणकरण छाजेड़	9887914000	बी
बी/006	प्रेक्षाध्यान केन्द्र	मणिनगर, कांकरिया	श्री उम्मेद कोचर	9426412624	बी

दूसरी कीमती चीजें यदि खो जाए तो उन्हें दुबारा प्राप्त किया जा सकता है।
किन्तु समय एक ऐसी चीज है जिसे खोने के बाद, दुबारा कभी नहीं पाया जा सकता।।

– आचार्य महाश्रमण

श्रद्धावनत

श्रीमती सायर–हीरालाल मालू

(सुजानगढ-बैंगलोर)

प्रेक्षा-दर्शन

मंत्र शक्ति का सदुपयोग भी हो सकता है

मंत्र शक्ति का सदुपयोग भी हो सकता है और दुरुपयोग भी हो सकता है। आचार्य भद्रबाहु ने संघ की सुरक्षा के लिए उवसग्गहरं स्तोत्र का निर्माण किया। उसे संघ को देते हुए कहा- जब भी कोई समस्याएं आए, विघ्न उपस्थित हो, उस समय इस स्तोत्र का उच्चारण करने पर देव प्रस्तुत होगा, संकट का निवारण करेगा। उपयोग और दुरुपयोग साथ-साथ चलते हैं। एक बहन के दुरुपयोग के कारण आचार्य ने स्तोत्र में परिवर्तन कर दिया। उसके जाप से संकट तो दूर होता रहा, किन्तु देव की साक्षात् उपस्थिति छूट गई।

Mantra power may be used or abused too. Acharya bhadrabahu composed the Uvasaggaharam stotra for the security of his sangha. While giving it to the sangha he said, Whenever there is a problem or an obstacle the chanting of this Mantra will summon the deity that will get rid of the crisis. When a lady misused the Mantra the Acharya changed the text of the Mantra to avert crises but not summon a deity to do it.

महामंत्र के पांचों पदों में पांच परम आत्माएं जुड़ी

नमस्कार महामंत्र के पांचों पदों में पांच परम आत्माएं जुड़ी हुई हैं। कोई अल्प शक्ति जुड़ी हुई नहीं है। विश्व की पांच महाशक्तियां इसके साथ जुड़ी हुई हैं। केवल आत्मा और केवल परमात्मा इसके साथ जुड़ा हुआ है। अर्हत् परमात्मा है, सिद्ध परमात्मा है। आचार की गंगा में अवगाहन करने वाले और ऐसे नंदनवन में रहने वाले जिनके आस-पास सौरभ फूटता है, वे परम आत्मा का जागरण करने वाले आचार्य इसके साथ जुड़े हुए हैं, वे उपाध्याय इसके साथ जुड़े हुए हैं जो समग्र श्रुतराशि का अवगाहन कर ज्ञान का आलोक विकीर्ण करते हैं। इसके साथ जुड़े हुए हैं वे साधु या साधक जो आत्मा के समस्त आवरणों को दूर कर, परमात्मा से साक्षात्कार करने का सतत उपक्रम कर रहें हैं। विश्व की सारी पवित्र आत्माएं किसी संप्रदाय की नहीं, किसी धर्म विशेष की नहीं, किसी जाति की नहीं, सबकी हैं, वे सब इसके साथ जुड़ी हुइ हैं।

The five steps of the Namaskar mantra invoke five great super powers. Of the five great powers of the earth associated with it, only Atma and parmatma are attached to it. Arhat is paramatma and so is siddha. They include those great Acharyas who seek self realisation, and who have gone to the heart of all Knowledge, and spread the light of knowledge and wisdam. Among them are those sadhaks and saints who have unwrapped their souls and are starving day in and day out for a glimpse of the paramatma. They do not belong to any particular community or religion or caste or nationality.

नवकार मंत्र का महत्त्व

नमस्कार महामंत्र की उपासना करने वाला साधक 'णमो अरहंताणं' को श्वेत वर्ण में 'णमो सिद्धाणं' को अरुण वर्ण में 'णमो आयरियाणं' को पीले वर्ण में 'णमो उवज्झायाणं' को हरे वर्ण में और 'णमो लोए सव्व साहूणं' को नीले वर्ण में लिखे। आंखे बन्द कर उन सभी अक्षरों को पढ़ें। चमकते हुए रंगों में ये सारे वर्ण बन्द आंखों के सामने स्पष्ट हो जाएंगें। इस अभ्यास की संपूर्ति के लिए तीन या छह महीने का समय अपेक्षित है।

The sadhak who practises Namaskar Mahamantra should write Namo Arihantanam in white, Namo siddhanam in the colour of sunrise, Namo Ayariyanam in yellaw. Namo Uvajjhayanam in green, Namo Loye savva Sahoonam in blue. He should then close his eyes read those letters. His mind's eye will see them in the shining colours they have been witten in. This practice may take three or six months to master.

आराधना में आरोहण की भूमिका

जो व्यक्ति मंत्र का मानसिक अभ्यास करना चाहे, वे अपनी आंखों की कीकी को थोड़ा ऊपर उठाये, भृकुटि को भी ऊपर उठाये और मन की पूरी शक्ति को ज्योतिकेन्द्र, तिलक के स्थान पर, केन्द्रित करे और इसी स्थान से मंत्र का जाप चले। उच्चारण नहीं, केवल मंत्र का दर्शन, मंत्र का साक्षात्कार, मंत्र का प्रत्यक्षीकरण। इस स्थिति में मंत्र की आराधना से वह सब कुछ उपलब्ध होता है जो उसका विधान है। मंत्र इस भूमिका तक पहुंचकर ही कृतकृत्य होता है। यह उसके आरोहण की भूमिका है।

Those who intend to practise Mantra should roll their eyeballs upeards a little, raise their eyebrows, focus on the centre of the forehead- the jyoti kendra and then chant. There will be no utterance of the Mantra. Only a perception, visualisation and realisation of it. In such a state the Mantra will be actualised.

जीवन जीने की कला

❁ मुनि सुधाकर

नार्मन कजिन्स अमेरिका के प्रतिष्ठित पत्रकार व चर्चित पत्रिका सैटेर्ड रिव्यू के संपादक थे। उन्हें मेटाइड आर्थराइटिस रोग ने घेर लिया। जिससे धीरे-धीरे उनकी हड्डियां सिकुड़ने लगी। वे असहनीय पीड़ा का अनुभव करते हुए कराहते व बिलखते रहते। उनका जीवन के प्रति नकारात्मक नजरिया बन गया। हर क्षण उनका निराशा व चिंता में बीतने लगा। एक बार हॉस्पिटल में उनका एक चिकित्सक मित्र उनसे मिलने के लिए आया, उसने कहा- कजिन्स! अगर तुम इस तरह चिंता करोगे तो तुम्हारी चिता बनने का समय दूर नहीं है। मौत नजदीक है तो रो-रो के और चिंता में क्यों?आनन्द, प्रसन्नता व हंसते हुए जीओ। मित्र के जाने के पश्चात नार्मन कजिन्स ने डॉक्टर से कहा-मैं आज से प्रतिदिन २० मिनट रुम बंद करके हंसूंगा। आप मुझे पागल मत समझना। नार्मन कजिन्स ने यह प्रयोग शुरु किया और थोड़े ही समय में आश्चर्यजनक परिणाम सामने आया। कुछ समय में वे पूर्ण स्वस्थ हो गए, इसके पश्चात उनके १२० विश्वविद्यालयों में "मैं अब तक कैसे जीवित हूं" विषय पर व्याख्यान हुए। नार्मन कजिन्स ने यह सिद्ध कर दिया आप आनंद, प्रसन्नता व हंसकर चिंता व बीमारी को ही नहीं भगाते बल्कि जीवन को भी खुशहाल बनाते है।

चिंता आधुनिक युग की ज्वलन्त समस्या व अनेकों बीमारियों के जनक के रूप में उभर रही है। किसी शायर ने सटीक कहा-

"हरेक जिस्म घायल, हरेक रूह प्यासी।
निगाहों में उलझन, दिलों में उदासी।।"

चिंता जीवन की अनंत शक्तियों को कुंठित कर देती है। उससे अनिद्रा, स्मरण शक्ति का कमजोर होना, कार्य क्षमता का क्षीण होना, चिडचिडापन व थकान महसूस होना, नशे का आदी बन जाना और भी न जाने कैसी-कैसी समस्याओं व बीमारियों का जन्म होता है। आइए जानें कैसे कहें- नो टेंशन।

आशावादी बनें : मार्टिन सेलिगमेन ने पेनसिल्वेनिया युनिवर्सिटी में २४ साल तक रिसर्च करने के पश्चात महत्त्वपूर्ण पुस्तक लर्न ऑप्टिमिज्म लिखी। जिसमें उन्होंने लिखा- हमारी सफलता, खुशी का एक मात्र मंत्र है आशावादी नजरिया। आशावादी मुश्किलों में घबराने के बजाय साहस व वीरता से उनका सामना करता है। उनके मानस पटल पर अंकित होता है, मुश्किल बाधा डालने के लिए नहीं बल्कि हमें सिखाने के लिए आती है। आशावादी चिंता की लकीरों को भी सुंदर चित्र में बदल देता है। शायर ने सुंदर कहा-

है ये सदा से तकदीर की गर्दिश का चलन,
चाँद सूरज को भी एक दिन लग जाता है ग्रहण।
मर्द तो वो है जो मुसीबत में परेशान न हो,
कोई मुसीबत नहीं ऐसीं जो आसां न हो।।

भय से मुक्त बनें : मैंने सुना! एक बच्चा बिस्तर पर लेटे-लेटे हाथ-पांव को बार-बार जोर-जोर से हिला रहा था। किसी ने पूछा-यह क्या कर रहे हो ?उसने कहा-तैरना सींख रहा हूं। तैरना ही सीखना है तो पानी के मध्य जा कर सीखो। उसने निराशा भरे शब्दों में कहा-पानी से तो मुझे डर लगता है। जो पानी से डरता है, क्या वह तैरना सीख सकता है ? वैसे ही जो भयभीत रहता है, वह कभी चिंता मुक्त नहीं हो सकता।

नो टेंशन के लिए भय की ग्रंथी से मुक्त होना जरुरी है। जिस प्रकार दूसरों को डराना पाप है, उसी प्रकार स्वयं भयभीत रहना भी महापाप है। जिनका आत्मबल, मनोबल, संकल्पबल कमजोर होता है, वह अकारण ही अपने जीवन में व्यर्थ की आशंकाओं और कठिनाइयों के जाल बुनते रहते है। वे हर समय सशंकित और आशंकित ही नजर आते है। जो टेंशन का मुख्य कारण बनती है। याद रखे-भय मुक्त-चिंता मुक्त।

समत्व का विकास करें : समय परिवर्तनशील है। जीवन में उत्थान-पतन व सुख-दुःख की लहरें उत्पन्न होती रहती है। हमें अनुकूल और प्रतिकूल दोनों परिस्थितियों में 'यह भी सदा नहीं रहेगा' का मंत्र याद रखना चाहिए। सुख में सोचे यह सदा नहीं रहेगा, इसलिए अभिमान करना भूल है। दुःख में सोचे, सुख सदा नहीं रहा तो दुःख भी सदा नहीं रहेगा। इस विचार से चिंता के भाव स्वतः दूर हो जाएंगे। टेंशन फ्री रहने के लिए समत्व की साधना का विकास अपेक्षित है। समत्व के अभाव में छोटी-छोटी समस्याएं व उलझनें भी विकराल रूप धारण कर लेती है। मनुष्य जितना बीमारी से बीमार नहीं होता, उतना बीमारी का बार-बार स्मरण करने से होता है। हमें किसी बीमारी या समस्या को मस्तिष्क पर हावी नहीं होने देना चाहिए। मस्तिष्क जितना शांत होगा आप उतने ही टेंशनलेस रहेंगे।

चिंता नहीं चिंतन करें : जो चिंतित रहते है वह केवल चिंता से उलझे रहते है। जो चिंतन करते है वह प्रसन्नता से जीते हैं। आज अनेकानेक विश्वविद्यालयों में "थिंकिंग" विषय के चेयर स्थापित हो रहे हैं। जहां शिक्षण-प्रशिक्षण व शोध का कार्य होता है। 'चिंतन कैसे करें" हमारा मस्तिष्क "चिंतन की फैक्ट्री" हैं। जो असंख्य विचारों का उत्पादन करती है। मानना चाहिए जो समय चिंतन में गया वह तिजोरी में गया, जो समय चिंता में गया वह कूड़ेदान में गया। नो टेंशन के लिए सकारात्मक चिंतन व संकल्प करें। उपनिषद् का प्रसिद सुभाषित है-"शिव संकल्प मस्तु में मनः" मेरा मन पवित्र चिंतन व संकल्पों से ओत-प्रोत रहे। जितना हमारा मन पवित्र चिंतन और संकल्प से भावित होता है, उतना ही चिंता का भाव दूर हटता है। आज नाना प्रकार के नकारात्मक भाव बढ़ रहे है। जिससे मानस चिंतित, व्यथित व बोझिल हो रहा है। अनेकों युवक पूछते है-मुनिश्री! हमारे स्टार फेवरेबल (Star Fevorable) है या नहीं?मैं उनसे पूछता हूं यह बताओं आपका माइन्ड फेवरेबल (Mind Fevorable) है या नहीं? यदि माइन्ड फेवरेबल नहीं है तो स्टार कभी फेवरेबल नहीं हो सकते। पवित्र चिंतन ही आपको चिंता से मुक्त कर सकता है।

मुस्कुराते रहे : मुस्कान एक मानसिक टॉनिक है। मुस्कान से चेहरा प्रफुल्लित व खुश नजर होता है। मंद-मंद मुस्कान आपके चेहरें को निखारती है। मनोवैज्ञानिक डॉक्टर लिली एलन के कहा-"मुस्कान वह दवा है जो रोगों के निशान आपके चेहरे से ही नहीं हटायेगी, बल्कि रोगों की जड़ भी आपके अंतः से निकाल देगी।" टेंशनलेस एवं स्टारलेस बनने के लिए हर समय मुस्कुराते रहें। प्रफुल्लित चेहरें सभी को मुस्कुराने का संदेश देता है। विपरीत से विपरीत परिस्थिति में भी मुस्कान हमारी मनःशक्ति को मजबूत बना, हमें शक्ति देती है, जिससे हम कहते है No Tension.

अपनी सारी कमी को एक साथ न छोड़ सको तो
एक-एक कमी को दूर करने का प्रयास करो। - आचार्य महाश्रमण

श्रद्धावनत

प्रकाश प्रमोद बैद
लाडनूं - कोलकाता

पहल अपने आप से

❁ साध्वी प्रमुखा कनक प्रभा

कहा जाता है कि मनुष्य का जीवन अमूल्य है। अमूल्य जीवन में मूल्यों को जीना विसंगति सी लगती है। लेकिन अनेकांत के आधार पर विसंगति में भी संगति देखी जा सकती है। जीवन अमूल्य तभी है जब व्यक्ति मूल्यों को जीता है। अगर वह मूल्य को न समझे और न जीए तो जीवन का कोई मूल्य नहीं है।

शास्त्रों में कहा गया है चार बातें दुर्लभ है संसार में। उनमें पहला तत्व बताया है-मनुष्य जीवन। मनुष्य जन्म दुर्लभ है ऐसा तो नहीं कहा जा सकता। अगर मनुष्य जन्म दुर्लभ होता, तो परिवार नियोजन का प्रसंग उत्पन्न नहीं होता, लेकिन परिवार नियोजन का जो अभियान चल रहा है और जन्म संख्या का जो अनुपात घटाया जा रहा है इससे यह बात प्रमाणित होती है कि मनुष्य जन्म दुर्लभ नहीं है, जीवन भी दुर्लभ नहीं है, सार्थक जीवन और वास्तव में वही जीवन है, जिसमें सार्थकता होती है।

जीवन के मूल्य दो प्रकार के होते है-सामयिक मूल्य और शाश्वत मूल्य। हम दूसरे शब्दों में कहें तो भौतिक मूल्य और आध्यात्मिक मूल्य या हम यों कह सकते हैं कि आध्यात्मिक मूल्य और व्यवहारिक मूल्य। ये सभी जीवन के मूल्य हैं। लेकिन जो भौतिक मूल्य है या सामयिक मूल्य हैं, उनके आधार पर जीवन को उत्कृष्टता के शिखर तक नहीं ले जाया जा सकता। यह माना जा सकता है कि ये जीवन की कुछ आवश्यकताएं हैं। व्यक्ति अर्थ के बिना नहीं जी सकता और परिवार के बिना नहीं जी सकता। लेकिन इन मूल्यों से जीवन में कोई बदलाव आता है, रूपान्तरण के बिना नहीं जी सकता। लेकिन इन मूल्यों से जीवन में कोई बदलाव आता है, रूपान्तरण घटित होता है, ऐसी बात भी देखने में नहीं आती। इसलिए हमारे सामने प्रश्न उठता है कि कौन से ऐसे मूल्य है जिन्हें जीने से सार्थकता का बोध हो सके।

यूं तो जीवन में इतने मूल्य है कि जिनकी गणना करें तो उन्हें संख्या में बांधना भी कठिन है। लेकिन कुछ मूल्य मौलिक है जो हमारी रोजमर्रा की जिन्दगी में महत्त्व रखते हैं। पारिवारिक, सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन में जिन मूल्यों को जीने से एक नया निखार आता है, नया परिवर्तन आता है उन मूल्यों की चर्चा युगीन परिस्थितियों में आवश्यक है।

अभय

प्रश्न उठाया गया है कि नीतिवान मनुष्य कौन होता है?उत्तर में कहा गया-जो व्यक्ति अभय रहता है, वह नीतिवान बन सकता है। अभय ऐसा मूल्य है जो व्यक्ति को साधना के क्षेत्र में व्यवसाय के क्षेत्र में, व्यवहार के क्षेत्र में आगे बढ़ने की प्रेरणा देता है।

हम पहले सोचें कि भय किसको होता है और अभय कौन बन सकता है?अर्हत् वंदना में हम हमेशा उच्चारण करते है-सव्वतो पमत्तस्य भयं। सव्वतो अपमत्तस्स णत्थि भयं-भय उसे होता है जो प्रमादी होता है। प्रमादी का अर्थ है-जो जागरूक नहीं होता, जीवन के प्रति सावधान नहीं रहता, जिसका शरीर और मन एकाग्र नहीं होता।

जहां प्रमाद है वहां भय का समावेश सहज रूप से हो जाता है। इसके साथ-साथ बुद्धि जितनी प्रखर होती है, भय की प्रखरता भी उतनी ही बढ़ती जाती है। बौद्धिक व्यक्ति ज्यादा भयभीत होता है। वह अनेक प्रकार की आशंकाओं से घिरा रहता है। अभय आता है प्रज्ञा के जागरण से। ज्ञान का अनुष्ठान और प्रशिक्षण प्रज्ञा के जागरण के लिए। प्रज्ञा जिस दिन जाग जाएगी अभय का मूल्य अपने आप व्यक्ति अपने जीवन में उतार लेगा। जो व्यक्ति अभय रहता है, उसे न चिंता है, न आशंका है और न खिन्नता का बोध। वह सदा सम्पन्न और प्रफुल्ल रहता है।

अगर अभय को जीना है और अभय को सीखना है तो इसके लिए साधना करनी आवश्यक है। ध्यान के साथ अनुप्रेक्षा का अपना मूल्य है। जिस मूल्य को व्यक्ति अपने जीवन में लाना चाहता है उस मूल्य की अनुप्रेक्षा करें। एक माह या दो माह के अभ्यास से उसे अनुभव होने लगेगा कि वास्तव में ये संस्कार जागृत हो रहे है। ये मूल्य उसके जीवन में उतर रहे है।

मृदुता

व्यक्ति अपनी वृत्तियों से कोमल होता है तथा दूसरों के प्रति भी कोमल होता है। किन्तु मृदुता के संस्कार के अभाव में वह क्रूर बन जाता है और आज की जितनी समस्याएं हैं उन सभी समस्याओं का सम्बन्ध क्रूरता से है, क्योंकि मनुष्य पशुओं के प्रति, पक्षियों के प्रति भी क्रूर होता है। आज जिस प्रसाधन सामग्री का उपयोग होता है-मृदुताशील व्यक्ति उस प्रसाधन सामग्री का उपयोग नहीं कर सकता। जिसमें पशु-पक्षिओं की कितनी नृशंस हत्या होती है। आप लोग स्वयं पढ़ते हैं पत्र-पत्रिकाओं में कि किस प्रकार नृशंसतापूर्वक पशु पक्षियों की हत्या करके इस प्रसाधन सामग्री का निर्माण किया जाता है। कौन व्यक्ति उसका उपयोग करेगा? जिसके दिल में कोमलता होगी, संवेदनशीलता होगी, करूणा होगी, वह तो यह बात सुनते ही सिहर जाएगा।

दहेज की समस्या हमारे सामने है। इसके कारण जो यातनाएं दी जाती है, कौन व्यक्ति ऐसा कार्य कर सकता है? वह स्त्री हो या पुरुष, जिसके अन्तःकरण में क्रूरता है वही व्यक्ति किसी को मानसिक रूप से यातना दे सकता है। इसी प्रकार की एक समस्या और है-भ्रूणहत्या की। जिसका सीधा सम्बन्ध महिलाओं से है। यह भी एक पारिवारिक घटना है तथा इसका सीधा सम्बन्ध भी मन की करूणा या क्रूरता से जुड़ा है।

मृदुता का मूल्य अगर आत्मसात होता है तो मैं समझती हूं कि कोई भी व्यक्ति भ्रूणहत्या के पक्ष में नहीं होगा। भ्रूणहत्या किसलिए होती है? गर्भ में कोई कन्या है किन्तु जिस व्यक्ति का थोड़ा भी आत्मा में विश्वास है, कर्म में विश्वास है वह यदि भ्रूणहत्या की बात सोचेगा तो कांप उठेगा। अफसोस तो इस बात का है कि इन मूल्यों को समझा नहीं गया। जब तक मूल्यों का बोध नहीं होगा और समझ विकसित नहीं होगी वे जीवन में कैसे उतरेंगे? कैसे मृदुता जागेगी और कैसे जीवन में बदलाव आएगा? सुख, शांति और समृद्धि के लिए मन में करूणा का जागना बहुत जरूरी है।

सत्य लगने वाली बात को भी शांति के साथ प्रस्तुत करो।
आवेश अपने आप में असत्य ही है।।
- आचार्यश्री महाश्रमण

श्रद्धावनत

पी. सम्पतराज आंचलिया, टी.ताराचंद आंचलिया पी.ज्ञानचंद आंचलिया
सिरकाली-चेन्नई-दिल्ली-मरुधर (पादूंकलां)

सत्य

भ्रष्टाचार की जितनी समस्याएं हैं, उनकी पृष्ठभूमि से जुड़ा बिन्दु है सत्य का अस्वीकार। व्यक्ति के मन में एक सत्य के प्रति आस्था हो जाए तो दूसरे मूल्य स्वयं जाकर जुड़ते हैं। सत्य के प्रति आस्था है, इसका मतलब है लक्ष्य के प्रति आस्था है। लक्ष्य के उपायों के प्रति आस्था है। सत्य के प्रति विश्वास नहीं होता तो लक्ष्य से भी वह विपरीत दिशा में गति करने लगता है। सत्य के प्रति आस्था है तो वह व्यक्ति वचन देकर नहीं बदलता है। वह व्यक्ति दूसरे का अहित भी नहीं सोच सकता, और जो कुछ उसने कहा है, उसके पालन में यदि कहीं भी कमी होती है तो उसे वह स्वयं भी बर्दाश्त नहीं कर सकता।

यह मान कर चलना चाहिए कि जो व्यक्ति सत्य की साधना कर लेता है, वचनसिद्धि का मंत्र उन्हें मिल जाता है। बहुत बार ऐसा कहा जाता है कि अमुक व्यक्ति जो बात कहता है उसकी बात प्रायः मिल जाती है। कोई कहता है उसके बत्तीस दांत है इसलिए उसकी बात मिल जाती है। कुछ और भी तर्क देते है। लेकिन मूलभूत तथ्य यह है कि जो लोग सत्यनिष्ठ होते हैं और सत्यभाषी होते हैं और किसी भी परिस्थिति में असत्य का सहारा नहीं लेते, उन लोगों को निश्चित ही वचनसिद्धि का वरदान प्राप्त रहता है। यद्यपि तपस्या कठिन, बहुत कठिन हैं। किन्तु यदि संकल्प दृढ़ है तो किसी भी मूल्य को जीना कठिन नहीं होता है। सत्य साध्य तक पहुंचने का महत्त्वपूर्ण सोपान है।

सरलता

जीवन में कोई छिपाव नहीं, कोई माया नहीं, कोई प्रपंच नहीं। बस, यही प्रकाश है सरलता का। आप यह समझ लीजिए कि हम कोई भी प्रवृत्ति करते हैं या किसी के साथ कोई बात करते हैं अगर हमारे मन में यह आशंका पैदा हो जाती है कि कोई हमारी बात को सुन न ले और कोई हमारी क्रिया को देख न लें, मन में इस विकल्प के पैदा होने का अर्थ ही है कि हम ऋजु नहीं है, सरल नहीं हैं और जो कुछ भी करना हैं, वह छिपकर करना चाहता हैं। दूसरा कोई हमारी बात सुन न ले, इसका मतलब है कि हम किसी के बारे में ऐसी बात कर रहे हैं जो कि हमें नहीं करनी चाहिए।

जहां ऋजुता आ जाती है वहां किसी भी प्रकार के छिपाव की जरूरत नहीं है। जो कुछ है वह साफ-साफ है। पर उसका मतलब यह नहीं कि व्यवहार की सच्चाई को हम भुला दें। साफ कहने का मतलब यह नहीं कि कथन में इतनी स्पष्टता हो कि किसी दूसरे का अहित हो जाए। व्यवहार जगत में भी विवेक चाहिए। जीवन में छिपाने की, कपट करने की, छल प्रपंच करने की मनोवृत्ति का न होना ही महत्वपूर्ण मूल्य है ऋजुता का।

करूणा

सामुदायिक जीवन में परिवार भी है और समाज भी है। यदि व्यक्ति के अन्तःकरण में करूणा नहीं होती है तो सामूहिक जीवन में वह सफलतापूर्वक नहीं जी सकता। करूणा का अर्थ यह नहीं कि हम किसी दीन दुःखी पर दया करें, अनुकम्पा करें। उस करूणा को जीवन में कोई स्थान प्राप्त नहीं है। करूणा का अर्थ है-अपने चित्त की आर्द्रता। जो दूसरे के सुख और दुःख को अपने में नियोजित करता है वह व्यक्ति करूणाशील होता है और जो करूणाशील होता है वह अपने प्रति ही नहीं, सबके प्रति होता है। करूणा का अर्थ है अहिंसा। अहिंसक व्यक्ति किसी को सता नहीं सकता। मारना तो बहुत दूर की बात है, दिल दुखाने की बात भी नहीं सोचता।

जिस व्यक्ति के चित्त में प्राणीमात्र के प्रति करूणा नहीं होती, दया नहीं होती, वह व्यक्ति किसी को कुछ नहीं समझता। वह सोचता है कि जो कुछ हूं, वह मैं ही हूं। अहं आते ही करूणा खंडित हो जाती है। अहंकार और ममकार दोनों करूणा में बाधक बनते हैं। करूणा का क्षेत्र विस्तृत है वसुधैव कुटुम्बकम्। विश्वात्मा के प्रति तादाम्मय का भाव। विश्व का कोई भी प्राणी ऐसा नहीं है जो मेरा नहीं है। जहां व्यक्ति का ममत्व इतना विस्तृत हो जाता है वहां छोटे ममत्व की भावना अपने आप समाप्त हो जाती है।

जीवन का छठा मूल्य है-धृति

जीवन की सफलता में इस मूल्य का बड़ा हाथ है। आप किसी भी बड़े व्यक्ति से पूछिए कि आपके जीवन की सफलता का क्या रहस्य है?वह और भी बहुत सारी बातें बता सकता है पर एक बात अवश्य बताएगा-धृति। जिसमें धृति होगी वही आगे बढ़ सकता हैं, वही सफलता के शिखर पर पहुंच सकता है। हमने आज कोई काम शुरू किया, सफलता नहीं मिली। उस काम को बीच में ही निराश होकर छोड़ दिया, क्या कभी सफलता मिल सकेगी?

एक कुआं खोदना शुरू किया और चार हाथ गहरा खोदा, पानी नहीं निकला और उसे छोड़ फिर दूसरा खोदा, पानी नहीं निकला, फिर उसे भी छोड़ दिया, फिर तीसरा खोदा, उसे भी छोड़ दिया और फिर चौथा खोदा-इस तरह क्या हम कभी पानी निकाल पाएंगे?चाहे कोई हजार कुएं खोद लें फिर भी पानी नहीं निकलेगा। लेकिन वहीं शक्ति कोई एक कुआं खोदने में खर्च करता है तो निश्चित रूप से पानी निकलता है। लेकिन उसमें धृति चाहिए। चलनी में पानी जमने तक का धैर्य। इसके लिए आवश्यक है कि व्यक्ति अपने से नीचे वालों को देखें। व्यक्ति का धैर्य तब टूटता है जब वह केवल अपने ऊपर वालों को देखता है। सोचता है-वे कितने सम्पन्न हैं, उनके पास सुख-सुविधा के कितने साधन है, व्यवसाय का क्षेत्र कितना व्यापक है, हम लोग कितने खपते हैं, श्रम करते हैं फिर भी हमें वांछित लाभ नहीं मिलता और वे लोग थोड़े समय में ही लखपति, करोड़पति बन गए, ऐसा सोचकर व्यक्ति अधीर होकर व्यापार छोड़ दे तो कभी सफल नहीं हो सकेगा।

साधना के क्षेत्र में उतरने वाले व्यक्ति यह सोच लें कि देखो, अमुक व्यक्ति को इतनी सिद्धियां प्राप्त है और मुझे साधना करते करते इतना समय हो गया है अब तक मुझे कुछ भी नहीं मिलता है तो मन की ऐसी स्थिति साधक के लिए और भी घातक बन जाएगी।

आपने सुना होगा-गौतम स्वामी भगवान महावीर के प्रिय शिष्य, प्रथम गणधर थे। वे अपने शिष्यों के साथ घूमते थे। उन्होंने जिन व्यक्तियों को दीक्षित किया उनको केवलज्ञान उपलब्ध हो गया पर गौतम स्वामी को केवलज्ञान नहीं हुआ। इस स्थिति से वे अधीर हो गए। वे सोचने लगे, मुझमें कहां कमी है?आज मैंने जिनको दीक्षित किया, वे केवली बन गए और मैं अभी किनारे पर ही बैठा हूं। उनके धैर्य का बांध टूट गया।

भगवान ने देखा गौतम की स्थिति को। सोचा-इस समय यदि इसको संभाला नहीं गया तो पता नहीं इसकी मानसिकता इसको कहां ले जाएगी?उन्होंने गौतम स्वामी को सम्बोधित करके कहा कि गौतम! अधीर मत हो। तुम्हारे केवलज्ञान में एक बाधा है और वह है-मेरे साथ तुम्हारा इतना सम्पर्क। यह परिचय, यह लगाव और यह आसक्ति। और यह भी बहुत पुरानी हे। यही लगाव तुम्हारी सिद्धि में, केवलज्ञान की उपलब्धि में बाधक बन रही है। लेकिन तुम चिन्ता मत करो। एक दिन ऐसा आएगा, यह बाधा स्वयं हटेगी और तुम भी मेरे तक पहुंच जाओंगे। केवलज्ञान को प्राप्त कर लोगे।

गौतम के धैर्य का बांध टूटते-टूटते बच गया।

जीवन में ऐसा होता है कि प्रतिकूल परिस्थिति के आने पर, कोई भी व्यक्ति अपने धैर्य को छोड़ सकता है। लेकिन धैर्य को छोड़ना नहीं, कठिन परिस्थिति में धृति को अविचल रखना बड़ी बात है। इसलिए जीवन मूल्यों के आचरण में धृति भी रखना जरूरी है।

संचालित प्रेक्षावाहिनियों के संवाहकों की सूची

क्रम सं.	नाम/स्थान	सम्पर्क सूत्र
01	राज गुनेचा, दिल्ली (कृष्णानगर)	09268729037
02	कविता सुराणा, दिल्ली (शाहदरा)	09818939020
03	सरिता चोपड़ा, दिल्ली (शालीमार बाग)	09868716701
04	हनुमान बरड़िया, दिल्ली (लक्ष्मीनगर)	09310147197
05	मनीषा जैन, दिल्ली (उत्तम नगर)	09899592787
06	श्वेता सेठिया, दिल्ली (लाजपतनगर)	09711970124
07	रेणु बोथरा, दिल्ली (शास्त्रीनगर)	09968075932
08	अमराव दूगड़, दिल्ली (कृष्णानगर)	09310003313
09	मंजू बैद, दिल्ली (मॉडल टाऊन)	09680013936
10	विमला दूगड़, कांदीवली, मुम्बई	09004937723
11	सूरज धोका, चेन्नई (साउकारपेट)	09381001574
12	ललित दुगड़, सूरत	09327386335
13	प्रवीण पुगलिया, कटक	09861366553
14	सुरेन्द्र ओसवाल, रायपुर	09425285121
15	रीना सेठी, जयपुर	09785026111
16	सरिता कांकरिया, जोधपुर	09829024782
17	सुरेश जैन, टिटिलागढ़	09437036494
18	विकास सुराणा, इचलकरंजी	09326021312
19	पुष्पा गन्ना, बैंगलोर	09686366250
20	सुनील छाजेड़, नागपुर	09881556411
21	निशा कुण्डलिया, विषाखापटनम्	09491765646
22	सुरेन्द्र/भारती, नोएडा	09899942507
23	अनुराग बैद, नोखा	09414417112
24	महेन्द्र मेहता, जोधपुर शहर	09413058604
25	धरमचंद बाफना अलीपुरद्वार	09434184608
26	जितेन्द्र पुगलिया, कोयम्बटूर	09843015393
27	शशि गांधी, न्यूअलीपुर,कोलकाता	98304334560
28	मनोज संकलेचा, पुणे	09822274374
29	देवीलाल कोठारी, केलवा	09413058604
30	सुबोध दूगड, उदयपुर	09414263586
31	नौरतन पारख, सिलीगुड़ी	09233423523
32	प्रवीण मेड़तवाल, उधना	09428398210
33	जेठमल चौधरी, भीलवाड़ा	09214966459
34	जयचंद दूगड़, कूचबिहार	08670272834
35	टीकमचंद बैद, दिनहटा	09547344571
36	धर्मचंद बोथरा, इरोड	09362258194
37	संदीप मादरेचा, डोंबिवली	09820368498
38	भारती डांगड़ा, कुर्ला	09869514103
39	सुनीता कोठारी, रतलाम	08989465876
40	ममता बांठिया, सूर्यनगर, दिल्ली	08010081967
41	भरत कुमार जैन, भीम	09414786474
42	अनंत कुमार जैन, गांधीधाम	09426217140
43	अशोक जैन, सवाईमाधोपुर	09413380835
44	सज्जनराज बांठिया, पाली	09414121314
45	निवेदिता नोलखा, टालीगंज, कोलकाता	09836371000
46	पुष्पा बैद, बेहाना	09831366760
47	मंजू सिपानी, भवानीपुर, कोलकाता	09804334560
48	सुधा जैन लेक टाउन, कोलकाता	09830216254
49	मंजू सिपानी, अलीपुर, कोलकाता	09804334560
50	बबिता तातेड़, काकुरगाछी, कोलकाता	09831740337
51	प्रेम धाड़ेवा, विशाखापट्टनम	09866102694
52	गौतमचंद सालेचा, जसोल	09414108229
53	डा. विजयश्री शर्मा, लाडनूं	08233344482
54	नरेन्द्र दुगड़, अमरायवाड़ी ओढव	07922893069
55	रायचंद लूणिया, कांकरिया	09327004278
56	कमल भंसाली, खुश्कीबाग	09431230892
57	जंवरीलाल सालेचा, बालोतरा	09414106209
58	राजकुमारी बरड़िया, कोलकाता	09038005252
59	अंकिता नन्दकिशोर जैन, केसिंगा	09938820528
60	चंदा बोरड़, हैदराबाद	09849807591
61	सोनूकुमार जैन, सिन्धकेला	09776582348
62	अनिल बैंगाणी, बरपेटा रोड़, असम	09435124834
63	सरिता जैन, तुसरा	09438449559
64	बिमल कुमार जैन, उत्केला	09937074670
65	ममता जैन, कांटाभजी	09439870908
66	चंदन जैन, भवानीपटना	09937692805
67	नीलम बोथरा, फारबिसगंज	09471955551
68	राकेश सिंघी, बैलूर	09830031321
69	मनोज जैन, बोलांगीर	09437037788
70	प्रवीण बैद, बंगाईगांव	09435021191
71	सुमितकुमार जैन, बैंगामुंडा	09658961337
72	डा. माया शाह संग्रामपुरा, सूरत	09374533287
73	आनंद सेठिया, नागपुर	09373471831
74	श्रीमती अंजू जैन, हावड़ा, कोलकाता	09681230341
75	कन्हैयालाल बोथरा, गंगाशहर	09414142617
76	उषा धाड़ेवा, बांगुर, कोलकाता	09433092831
77	मंजू सिपानी, बालीगंज, कोलकाता	09804334560
78	मंजू सिपानी, शिवतल्ला, कोलकाता	09804334560
79	राजेश बैद, न्यूसीजी रोड, अहमदाबाद	09016721435
80	विमला दूगड़, कांदीवली, मुम्बई	09004937723
81	श्रीमती सुमन चोपड़ा, लूनकरनसर	09413400818
82	यशपाल गुप्ता, शेरपुर, पंजाब	09780728910
83	सुश्री प्रज्ञा जैन, नीमच	09425187845
84	सविता रुणवाल, कोल्हापुर	09850222241
85	मंजू सिपानी, बालीगंज	09804334560
86	मंजू सिपानी, शिवतल्ला	09804334560
87	सीमा गिड़िया, कोलकाता	09433955595
88	श्री रवि छाजेड़, नार्थ हावड़ा	09433022720
89	मोहनलाल बोथरा, बालीगंज	09331019457
90	श्री बसंत मालू, अहमदाबाद	09327002736
91	श्री मदन कोठारी, सूरत	09374532225

संभावित प्रेक्षावाहिनी संवाहकों की सूची

क्रम सं.	नाम/स्थान	सम्पर्क सूत्र
1	राजेश बैंगाणी, अररिया कोर्ट	9431259851
2	वीरेन्द्र संचेती, कटिहार	9431260358
3	कमल पुगलिया, कटिहार	9832096606
4	कमलेश धाकड़, नाथद्वारा	9461805833
5	राजेश डागा, नाथद्वारा	9413371045
6	राकेश संचेती, मोमासर	9694588430
7	रतनलाल सेठिया, पुणे	9822012358
8	बजरंग सुराणा, गौहाटी	9435404819
9	दीपशिखा बैद, हाजरा कक्षा	9007974585
10	सुशील बोरड़, विजयनगरम	9440985577
11	सुशीला पुगलिया,सरदारशहर	9982116227
12	सुश्री प्रज्ञा जैन, नीमच	9425187845
13	दिनेश नौलखा, मरोल, मुम्बई	9892765261
14	श्रीमती मंजू लूणिया, बैंगलूर	9343411603
15	प्रतिभा बोथरा, कोलकाता	9331297796
16	अनिल सांखला, जलगांव	9422566311
17	अभिषेक बोथरा, फालाकाटा	9434137753

क्रम सं.	नाम/स्थान	सम्पर्क सूत्र
18	नंदकुमार जैन, हिसार	9215902677
19	सविता रुणवाल, कोल्हापुर	9850222241
20	सुमन नाहटा, कोलकाता	9007078440
21	प्रियदर्शिनी जैन, हैदराबाद	8374704700
22	बीना बोथरा, कोलकाता	9331019457
23	ओमप्रकाश जैन, पीलीबंगा	
24	विनोद राठौड़, मुम्बई	9923767437
25	विकास जैन, मुम्बई	9819760767
26	आनंद लूणिया, कोलकाता	9330997778
27	प्रेमलता चौरड़िया, कोलकाता	9433061999
28	दिलीप दुगड़, तेजपुर,असम	9433061999
29	अभयराज बैंगानी, बीदासर	9954213279
30	महावीर संचेती, उधना, सूरत	9825788460
31	महावीर संचेती, सचिन, सूरत	9825788460
32	दीपिका बोथरा, बीकानेर	9351321988
33	दीपक टांटिया, चेन्नई	9176374822

ध्यान है नव सूर्योदय का होना

दुनिया का बहुत बड़ा आश्चर्य है कि व्यक्ति स्वयं को धोखा दिए जा रहा है। स्वयं को बिना जाने औरों को अपना परिचय दिए जा रहा है। एक सूर्य रोज प्रातः दिखाई देता है। रात होते ही अस्त हो जाता हैं साधक को वह सूर्य उगाना है जो सदा साथ रहे। रात और दिन दोनों बराबर प्रकाशित होते रहें।

जब प्रकाश हमारा साथी हो जाता है तब न गलतियां होती हैं, न भ्रांतियां पलती है, न संवेदनाएं जागती हैं। सारे पाप अंधेरे में पलते हैं और अंधेरे में ही जनमते हैं। ध्यान के प्रकाश में वह सब दीखता है जो भीतर तल में जन्मों-जन्मों से छुपा होता है।

पहला सूर्य उस दिन उदित होता है, जिस दिन चेतना के आकाश से अज्ञान का आवरण हट जाता है। प्रमाद का आवरण हटा, दूसरा सूर्य उदित हो गया। मूर्च्छा का आवरण हटा कि तीसरा सूर्य उदित हो गया। इस प्रकार कथा का आवरण हटा कि एक सूर्य और उदित हो गया। चंचलता का पर्ण आवरण हटा कि अंतिम सूर्य उदित हो गया। इसके बाद घर में कोई अंधेरा नहीं रहता। जीवन में सूरज का उतरना ही ध्यान में प्रवेश करना है।

– आचार्यश्री महाश्रमण

जब तक अज्ञानता की अनुभूति नहीं होगी,
तब तक व्यक्ति ज्ञान को प्राप्त नहीं कर सकता।। – आचार्यश्री महाश्रमण

श्रद्धावनत

प्यारेलाल, विनोद, संजय, सुनील, विनीत, वंश, अंश, वीर पितलिया

माण्डा (राजस्थान)-चेन्नई (तमिलनाडु)

आत्मविश्वास : सफलता का आकाश

मुनि दीप कुमार

सफल होने की आकांक्षा प्रायः सबमें रहती है। सफलता का मूल आधार-आत्मविश्वास है। अपने आत्मविश्वास को जगाकर ही सिद्धि का साक्षात्कार किया जा सकता है। भगवान महावीर ने कहा-'जारिसो सिद्ध सहावो, तारिसो सहावो वि जीवाणं' जो सिद्ध भगवान का स्वरूप है, वही स्वरूप तुम्हारा है। भगवान महावीर की यह वाणी आत्मविश्वास को विकसित करने का बहुत बड़ा मंत्र है। व्यक्ति के भीतर अनन्त शक्ति है। एक छोटी सी बूंद में अथाह जल राशि सागर का रूप अन्तर्गर्भित है, बीज में विशाल वटवृक्ष बनने की क्षमता छिपी हुई है। एक किरण में सहस्त्रांशु सूर्य का तेज छिपा हुआ है। इसी तरह हमारे अंदर भी असीम शक्ति का स्रोत है। मनुष्य की अन्य शक्तियां तो साधनमात्र है, वास्तविक सामर्थ्य तो आत्मविश्वास से उत्पन्न होता है। आत्मविश्वास की विद्यमानता से ही मनुष्य असंभव को संभव बना पाता है। इतिहास में ऐसे अनेक उदाहरण भरे पड़े है कि सामर्थ्य होते हुए भी आत्मविश्वास के अभाव के कारण लोग असफल रह गए। एक योद्धा का कथन है-युद्ध में बंदूके नहीं लड़ती, सैनिक

युद्ध नहीं करते, वरन् सैनिक का हृदय और उसका आत्मविश्वास ही रण में जीतता है।

सफलता के उच्च शिखर पर पहुंचने के लिए आत्मविश्वास ही सबसे बड़ा सहायक सिद्ध होता है। Self Confidence के द्वारा ही असंभव दिखाई देने वाला जटिल से जटिल कार्य भी सरल और संभव बन जाते है। आत्मविश्वास के अभाव में यदि किसी व्यक्ति के पास बन्दूक भी है, तब भी वह लाठी वाले साहसी व्यक्ति का मुकाबला नहीं कर सकता। युद्ध के दिनों में एक व्यक्ति अपनी बन्दूक लेकर मकान की छत पर जा बैठा, परन्तु जब एक सामान्य सैनिक ने जिसके हाथ में एक टूटा हुआ भाला था उसे ललकारा तो बन्दूक वाले व्यक्ति के हाथ कांप उठे और बन्दूक नीचे गिर पड़ी तथा उस सैनिक ने उसी बन्दूक की गोली से उसका काम तमाम कर उसे युद्ध की विभीषिका से मुक्त कर दिया।

गोलियथ ने जब इजराइलियों के शिविर में पहुंच कर उन्हें लड़ने के लिए ललकारा तो वे कांप उठे। एकदम से किसी का साहस न हुआ कि गोलियथ से जाकर लड़े। जब गोलियथ ने दुबारा चुनौती दी तो डेविड नाम के एक साधारण युवक ने उससे जूझने की ठानी। जब डेविड अपने से बड़े सैनिकों की आज्ञा लेकर आगे बढ़ा, तब उन्होंने उसे कई शस्त्र दिए, परन्तु डेविड ने वह शस्त्र लौटा दिए और कहा-मुझे इन शस्त्रों के प्रयोग की आदत नहीं। मैं अपने ही हथियारों से युद्ध करूंगा। उसने मार्ग से एक भारी पत्थर उठा लिया। गोलियथ ने जब डेविड को इस प्रकार पत्थर उठाते देखा तो वह बोला-आओ, मैं तुम्हारे शरीर के टुकड़े करके चील-कौओं के आगे डाल दूंग, परन्तु डेविड ने जो अनुपम साहस भरा उत्तर दिया वह लाजवाब था। वह बोला-तुम मेरे सामने ढाल-तलवार लेकर खड़े हो, परन्तु मैं एक सा अपराजेय शस्त्र लेकर आया हूं, जिसके द्वारा आज और अभी मैं तुम्हें यमलोक पहुंचा दूंगा और वह है इजराईल का दृढ़ आत्मविश्वास। डेविड ने वह पत्थर भरपूर शक्ति से उठाकर गोलियथ के माथे पर दे मारा और उसका वहीं काम तमाम हो गया। आत्मविश्वास के बल पर ही एक सैनिक अनेक सैनिकों से जूझ सकता है। इतिहास में ऐसी अनेक मिसाले है। आत्मविश्वास ही सफलता की कुंजी है। अपने मन और मस्तिष्क में चिंताओं को दूर करके अपने आत्मविश्वास को दृढ़ कीजिए तो सफलता आपके हाथों में होगी। आप किसी भी विजेता की ओर ध्यान दीजिए, उसकी विजय का रहस्य उसका अटल आत्मविश्वास ही है। मनुष्य की सम्पूर्ण सफलताएं आत्मविश्वास की ही शिला पर टिकी है। आत्मविश्वास के द्वारा असम्भव कार्य भी संभव हो सकते है।

यदि आप किसी महान कार्य में सफल होना चाहते हैं, तो अपनी महानता में दृढ़ विश्वास रखिये। यदि आप कोई विशेष उपलब्धि चाहते हैं, तो अपने उज्ज्वल भविष्य पर अटूट विश्वास पैदा कीजिए। जो मनुष्य आपके विश्वास को दुर्बल करता है, उसे अपना शत्रु ही समझिए। आपने जिस कार्य का निश्चय किया है, उसके करने की आपकी योग्यता पर जो संदेह प्रगट करता है उसकी बात न सुनिए, उस पर ध्यान न दीजिए। यदि आपका विश्वास विचलित हो गया, तो आपकी शक्ति नष्ट हो जाएगी। आपकी सफलता आपके आत्मविश्वास से अधिक ऊंची नहीं हो सकती, यदि आप जीवन में कुछ भी महत्त्वपूर्ण काम करना चाहते है, तो अपनी योग्यता, कार्यकुशलता पर अविश्वास को जड़-मूल से नष्ट कर दीजिए। जीवन में सेल्फ कॉन्फिडेंस का कोई विकल्प नहीं। यह वो मास्टर चाबी है, जो सभी मनुष्यों के लिए भाग्यरूपी महल के स्वर्ण द्वारों को खोलने का पथ प्रशस्त करती है। आत्मविश्वास जीवन रण में महान शस्त्र के समान है। शासन गौरव मुनिश्री बुद्धमलजी स्वामी ने इस सन्दर्भ में दो बहुत सुंदर उदाहरण दिए है। महारथी कर्ण अर्जुन से किसी प्रकार कम नहीं था, परन्तु स्वयं उसी के सारथी शल्य ने रण-क्षेत्र में लगातार उसके आत्मविश्वास को घटाने का प्रयास किया। उसने कहा कि अर्जुन एक महान योद्धा है। तुम उसकी बराबरी कभी नहीं कर सकते, तुम उससे किसी भी प्रकार जीत नहीं सकते। बार-बार दुहराये गए उक्त वाक्यों से कर्ण मानसिक स्तर पर टूट गया। उस स्थिति में न केवल उसके रथ का चक्र ही धंस गया, अपितु उसके मन का चक्र भी क्षोभ और अविश्वास के कीचड़ में धंस गया। न वह अपने रथ का उद्धार कर पाया और न ही मन का। असमंजसता की उसी अवस्था में अर्जुन के बाणों ने उसे वहीं ढेर कर दिया। इसके विपरीत इतिहास यह भी है कि महात्मा गांधी ने जब निरस्त्र भारतीयों के आत्मविश्वास

को जगाया तो दुनिया का सबसे बड़ा ब्रिटिश-साम्राज्य सशस्त्र सेनाओं की विद्यमानता में भी भूलूंठित हो गया। अहिंसा द्वारा हिंसक-शक्ति को पराजय करने का आत्मविश्वास जहां भारत को स्वतंत्र करा गया, वहां संसार के सम्मुख एक नया मार्ग-दर्शन भी प्रस्तुत कर गया। यद्यपि पहले उस आत्मविश्वास को एक पागलपन ही समझा गया था, परन्तु उसकी कार्य-परिणति ने अनेक संभावनाओं के द्वार खोल दिए।

असफलता, पराजय, अपूर्णता आदि आत्मविश्वास की कमी के ही विभिन्न परिणाम है। यदि उसकी परिपूर्ण खुराक व्यक्ति को मिलती रहे, तो भावना की कोई कली फूल बनकर सुरभि बिखेरने से पूर्व कभी मुरझा नहीं सकती। आत्मविश्वास को एक प्रकार का संजीवन रस ही मानना चाहिए। आत्मविश्वासी जहां-जहां जाते हैं, सभी के दिलों पर राज करते हैं। लोगों का उन पर विश्वास होता है। सभी उन पर भरोसा करते हैं। वो जो चाहते हैं थोड़े से प्रयास से प्राप्त कर लेते हैं। कहा भी है-

खुदी को कर बुलंद इतना, कि हर तकदीर से पहले,
खुदा बंदे से खुद पूछे, बता तेरी रजा क्या है ?

हार नहीं मानना

आत्मविश्वास का सही अर्थ है हर स्थिति में डटे रहने की भावना। जिस इंसान के पास कॉन्फिडेंस होता है, वह कभी हार नहीं मानता और प्रयास जारी रखता है। कॉन्फिडेंस के कारण वह दूसरों से अलग नजर आता है और लोग उसे देखकर कुछ सीखने का प्रयास करते है। आत्मविश्वास बाधाओं की तेज आंधी में भी अपने मार्ग पर डटे रहने की शक्ति का आधार है। किसी भी खेल में एक बाजी हारने को हारना नहीं कहते। हिम्मत हारने का नाम हारना है। तभी तो कहा भी गया है - 'हिम्मते मर्दा, मददे खुदा।'

मैं भी कर सकता हूं

आत्मविश्वास से भरा इंसान कहता है कि मैं भी इस काम को कर सकता हूं जबकि अहंकारी व्यक्ति का कथन होता है कि मैं ही इस काम को कर सकता हूं। इन दोनों बातों मे बड़ा अंतर है। खुद को सामान्य मानते हुए भी जो बड़े लक्ष्य हासिल करने का प्रयास करता है, सच्चा आत्मविश्वासी वहीं व्यक्ति होता है।

डरने की जरूरत नहीं

आत्मविश्वास अनुभव के साथ आता है। कोरी बातों से आत्मविश्वास पैदा नहीं होता। यह सिर्फ दिखावा होता है। परीक्षा की घड़ी में ऐसा आत्मविश्वास फैल हो जाता है। आत्मविश्वास व्यक्ति को किसी भी परिस्थिति से डर नहीं लगता, बल्कि वह लोगों को भी इस बात का भरोसा दिलाता है कि हर मुश्किल पर विजय हासिल की जा सकती है।

इंग्लैंड के राजा जार्ज तृतीय बहुत गुस्सैल स्वभाव के थे। जरा सी बात पर भी वे सजा देने से न हिचकते थे। एक बार वे बीमार पड़े तो कोई डॉक्टर उनके इलाज की हिम्मत नहीं जुटा पा रहा था। अंत में गांव का एक सीधा-सादा डॉक्टर उनके इलाज को राजी हुआ। वह आया तो राजा बेहोश थे। डॉक्टर के शुभचिंतकों ने कहा-उनके इलाज में खतरा है। कोई चूक हुई तो कड़ी सजा मिलेगी। डॉक्टर ने इस बात की परवाह किए बिना इलाज शुरू किया। उसने जांच के लिए राजा का खून भी निकाला। राजा की हालत जब बेहतर हुई और उसे पता चला कि डॉक्टर ने उसका खून निकाला है तो वह गुस्से से लाल होकर बोले-तुमने मेरी इजाजत के बगैर मेरा खून क्यों निकाला?डॉक्टर ने कहा-आप मुझे सजा जरूर दें लेकिन आप इस हाल में नहीं थे कि आपसे इजाजत ली जाती। डॉक्टर कई दिनों तक राजा की सेवा में लगा रहा। राजा ने उसे अपना निजी चिकित्सक बना लिया। जब दूसरे डॉक्टरों ने उसे पूछा कि राजा के इलाज में उसे डर नहीं लगा तो वह बोला जो लोग खतरा मोल लेकर भी आत्मविश्वास के साथ काम करते हैं, उन्हें सफलता अवश्य मिलती है, वे डरते नहीं है, अपना कार्य करते हैं।

आत्मविश्वास के बल पर बड़े से बड़ा लक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है। डेल कारनेगी ने ठीक ही कहा है-आत्मविश्वास बढ़ाने की यह रीति है कि वह काम करो जिसको करते हुए डरते हो।

- आत्मविश्वासी व्यक्ति हर व्यक्ति मे आत्मविश्वास जगा सकता है।
- जो व्यक्ति आत्मविश्वास से भरे हैं, उनकी बोलचाल, उठने-बैठने, रहन-सहन अन्य क्रियाकलापों से भी उसकी झलक अभिव्यक्त होती है।
- जिसका मनोबल कमजोर है, वह नकारात्मक सोच वाला होता है। मनोबली व्यक्ति स्वयं पर विश्वास करने वाला व सकारात्मक विचारों का धनी होता है।
- सही आत्मविश्वास को जगाओं और कठिनाइओं का सामना करने का हौंसला रखो।
- लक्ष्य निर्धारित करने से ही ऊंचे आत्मविश्वास के धनी बन सकते है।
- महान तथा सफल लोगों का विश्लेषण कीजिए, उनके महान बनने का पहला कारण होगा आत्मविश्वास और सिर्फ आत्मविश्वास।
- आत्मविश्वास में बहुत शक्ति होती है। आत्मविश्वास किसी भी परिस्थिति में उचित निर्णय लेने का साहस प्रदान करता है।
- दूसरे हम पर तभी विश्वास करेंगे, जब हममें आत्मविश्वास होगा।
- आत्मविश्वास की कुंजी है आशावादी होना, निराशावादी नहीं।

पूर्ण आत्मविश्वास में ऐसी सर्जन शक्ति का उदय होता है, जो कभी किसी कार्य को अपूर्ण नहीं रहने देती। अस्तु। आत्मविश्वास को हम सफलता का आकाश मान सकते है। जिसके उन्मुक्त आकाश में हम चाहें जितनी सफलता की उड़ान भर सकते हैं।

आगम साहित्य में ध्यान का स्वरूप

❁ आचार्य डॉ. शिवमुनि

मनुष्य के पास जितने भी साधन सुख-प्राप्ति के लिए है, उन साधनों के रहते हुए भी मनुष्य उतना ही अधिक तनावग्रस्त, दुखी, चिन्तित दिखाई देता है। बौद्धिक एवं वैज्ञानिक यह बात आग्रहपूर्वक कह रहे है कि सम्पूर्ण मनुष्य जाति शारीरिक कष्ट से उतनी दुखी नहीं है, जितनी मानसिक ताप से। इससे मुक्ति पाने के लिए ध्यान एकमात्र परमौषधि है। ध्यान के द्वारा मनुष्यों की मानसिक पीड़ा नष्ट की जा सकती है। इसलिए जागरूक एवं ध्यान-साधना में परिपक्व महापुरूषों के द्वारा सम्पूर्ण विश्व में ध्यान की ओर मनुष्यों को प्रेरित किया जा रहा है, उन्हें आकृष्ट किया जा रहा है।

'ध्यानं आत्मस्वरूप चिन्तनम्' अर्थात् आत्मस्वरूप का चिन्तन ही ध्यान है। इसमें ध्याता, ध्यान, ध्येय और संवर-निर्जरा ये चार बातें आती है।

ध्यान के महत्त्व के विषय में भगवान् महावीर का एक महत्त्वपूर्ण सूत्र है :-

'सीसं जहा सरीरस्स जहा मूलं दुमस्स च।
सव्वस्स साधु धम्मस्स तहा ध्यानं विधीयते।।'
- समण सुत्तं (४)

अर्थात् मनुष्य के शरीर में जैसे सिर महत्त्वपूर्ण है, वृक्षों में जैसे जड़ महत्त्वपूर्ण है, वैसे ही साधु के समस्त धर्मों का मूल ध्यान है।

ध्यान के अभ्यास से आत्मीय शक्तियां विकसित होती है। आत्मा की शुद्ध अवस्था प्राप्त होती है। ध्यान के सम्बन्ध में जैनाचार्यों का मत है कि उत्तम सहंनन वाले जीव का किसी पदार्थ में अन्तर्मुहूर्त के लिए चिन्ता का निरोध होता है, वही ध्यान है।

स्थानांग (ठाणांग) सूत्र में चार प्रकार के ध्यान वर्णित हैं- (१) आर्त्त ध्यान (२) रौद्र ध्यान (३) धर्म ध्यान और (४) शुक्ल ध्यान। चारों में प्रथम दो ध्यान आर्त्त और रौद्र संसार भ्रमण कराते हैं और अन्तिम दो धर्म ध्यान और शुक्ल ध्यान मोक्ष की प्राप्ति करवाने में सहायक होते है।

इन चारों प्रकार के ध्यान का अर्थ भी भली प्रकार समझ लेना आवश्यक है।

(१) आर्त्त ध्यान - स्त्री, पुत्र, रत्न, अलंकार, आभूषण एवं समस्त भोग सामग्री के वियोग को बचाने के लिए तथा इन्हीं की प्राप्ति के लिए जो चिन्तन-मनन होता है, उसी का नाम आर्त्तध्यान है।

(२) रौद्र ध्यान - हिंसा, झूठ, चोरी, स्त्री सेवन एवं अन्य भी सभी प्रकार के कलुषित कर्मों से उत्पन्न परिणाम के कारण जो चिन्तन होता है वही रौद्र ध्यान है। रौद्र ध्यान में सभी पापचार सम्मिलित है। इस ध्यान के चार उपभेद भी माने गए है -

(अ) हिंसानुबंधी, (ब) मृषानुबंधी (स) स्तेनानुबंधी तथा (द) संरक्षणानुबंधी। इस प्रकार का ध्यान करने वाला जीव कृपा के लाभ से वंचित, नीच कर्मों में लगा रहने वाला तथा पाप को ही आनंद रूप मानता है। यह ध्यान चतुर्थ गुणस्थान तक रहता है।

(३) धर्म ध्यान - स्त्री, पुत्र, अलंकार, आभूषण तथा सभी प्रकार की भोग सामग्री के प्रति ममत्त्व भाव इस ध्यान में कम होता चला जाता है। धीरे-धीरे आत्मचिन्तन की ओर प्रवृत्ति बढ़ती चली जाती है। विद्वान लोगों ने इसीलिए धर्म ध्यान को आत्म-विकास का प्रथम चरण माना है। द्वादशांग रूप जिनवाणी, इन्द्रिय, गति, काम, योग, वेद, कषाय, संयम, ज्ञान, दर्शन, लेश्या, भव्याभव्य, सम्यकत्व, सन्नी असन्नी, आहारक, अनाहारक इस प्रकार १४ मार्गणा, चौदह गुणस्थान, बारह भावना, १० धर्म का चिन्तन करना धर्म ध्यान है। धर्म ध्यान को शुक्लध्यान की भूमिका माना गया है। शुक्लध्यानवर्ती जीव गुणस्थान श्रेणी चढ़ना प्रारम्भ कर देता है। धर्म ध्यान के चार भेद माने गये हैं-

(१) आज्ञा विचय : इस ध्यान में सर्वज्ञ प्रवचन रूप आज्ञा विचारी जाती है, चिन्तन करते समय जिनराज की आज्ञा को ही प्रमाण मानना आज्ञा विचय है।

(२) अपाय विचय : अविद्या और दुःखों से मुक्त होने का उपाय सोचना अपाय विचय है।

(३) संस्थान विचय : लोक के आकार, स्वरूप आदि का विचार करना संस्थान विचय है। संस्थान विचय के भी चार उपभेद हैं, (अ) पिंडस्थ-पिंडस्थ ध्यान में शरीर पर विचार किया जाता हैं, पिंडस्थ ध्यान में पार्थिवी, आग्नेयी, मारुति, वारुणि, तत्वरूपवती इन पांच धारणाओं का चिन्तन किया जाता है।

(ब) पदस्थ-पदस्थ ध्यान में पद के साथ सिद्ध अवस्था पर भी चिन्तन किया जाता है। पदस्थ ध्यान में बैठा हुआ योगी हं, अर्हं तथा ऊं पद का ध्यान करना है, कभी पंच नमस्कार मंत्र का ध्यान करता है।

(स) रूपस्थ - रूपस्थ ध्यान में अर्हत् की विशेषताओं पर ध्यान किया जाता है। रूपस्थ ध्यान में बैठा हुआ योगी समवसरण में विराजमान अर्हत् परमेष्ठी का ध्यान करता है। कभी उनके सिंहासन तथा छत्रत्रय आदि आठ महाप्रातिहार्यों का विचार करता है। कभी चार घातिया कर्मों के नाश से उत्पन्न हुए अनन्तज्ञान, अनन्तदर्शन, अनन्तसुख, अनन्तवीर्य इन चार आत्मगुणों का चिन्तन करता है।

(द) रूपातीत - रूपातीत ध्यान में विमुक्त आत्मा के अमूर्तत्व और विशुद्धत्व पर मन केन्द्रित किया जाता है। आठ कर्मों का क्षय हो जाने से सिद्ध आत्मा के आठ गुण (अनन्त ज्ञान, दर्शन, सुख, वीर्य, क्षायिक समकित, अवगाहना, सूक्ष्मत्व, अगुरूलघुत्व) प्रकट हो जाते है और इन गुणों का ही ध्यान किया जाता है। यह ध्यान ग्यारहवें और बारहवें गुण स्थानवर्ती जीव को होता है, जिसके सम्पूर्ण कषाय उपशान्त या क्षीण हो गये है।

धर्मध्यान के चार लक्षण

धर्मध्यान के लक्षणों में मुख्य रूप से चार बातें हैं :

(१) आज्ञा रूचि-सूत्र और अर्थ इन दोनों में श्रद्धा रखना।
(२) निसर्ग रूचि-सूत्र और अर्थ में स्वाभाविक रूचि रखना।
(३) सूत्र रूचि-आगम में रूचि रखना।
(४) आगाढ़ रूचि-साधु के उपदेश में रूचि रखना।

धर्मध्यान में बाह्य साधनों का आधार रहता है।

धर्म ध्यान के चार आलम्बन

(१) वांचना-शिष्य के लिए कर्म निर्जरार्थ सूत्रोपदेश आदि देना।
(२) प्रच्छना-अध्ययन के समय सूत्रों में हुई शंका का गुरू से उसका समाधान प्राप्त करना।
(३) परिवर्तना-सूत्र विस्मृत न हो जाय इस लिए पूर्व पठित सूत्र का बार-बार स्मरण करना, अभ्यास करना।
(४) अनुप्रेक्षा-सूत्र अर्थ का बार-बार चिन्तन मनन करते रहता। इसके चार भेद है।
(अ) एकानुप्रेक्षा-आत्मा एक है।
(ब) अनित्यानुप्रेक्षा-सांसारिक सभी पदार्थ अनित्य है, नश्वर है-ऐसी भावना करना।
(स) अशरणानुप्रेक्षा-इस विराट विश्व में कोई भी मेरी आत्मा का संरक्षक नहीं है, इस प्रकार का विचार करना।
(द) संसारानुप्रेक्षा-ऐसा कोई भी पर्याय अब शेष नहीं रहा जहां आत्मा का जन्म-मरण नहीं हुआ हो, इस प्रकार का विचार करना। ये भी भेद-उपभेद का सुगम बोध कराते है।

(४) शुक्लध्यान-जिस ध्यान से आठ प्रकार के कर्मरज से आत्मा की शुद्धि हो जाती है, उसे शुक्लध्यान कहते है, इसका उदय सातवें गुणस्थान के बाद ही संभव है। इसके चार उपभेद है।

(अ) पृथक्त्व वितर्क सविचार- इसमें साधक मनोयोग, वचनयोग इन तीनों में से किसी एक योग का आलम्बन होता है। फिर उसे छोड़कर अन्य योगों का आलम्बन लेता है, वह पदार्थ के पर्यायों पर चिन्तन करता है। यह सब उसके आत्मज्ञान पर निर्भर करता है।

(ब) एकत्व वितर्क अविचार-इस ध्यान में पूर्व गत सूत्र के आधार से उत्पाद व्यय आदि किसी एक ही पर्याय का विचार करना है। विचार करते समय द्रव्य, पर्याय, शब्द योग इनमें से किसी एक का आलम्बन रहता है। इस अवस्था में पदार्थ पर संक्रमण नहीं होता। प्रथम ध्यान में एक द्रव्य या पदार्थ को छोड़कर दूसरे द्रव्य और पदार्थ की प्रवृत्ति होती है। परन्तु दूसरे ध्यान में यह प्रवृत्ति रूक जाती है। शुक्लध्यान के ये दोनों प्रकार सातवें एवं बारहवें गुणस्थान तक होते है।

(स) सूक्षम क्रियाऽप्रतिपाती-निर्वाण गमनकाल में उसी केवली जीव को यह ध्यान होता है जिसने मन, वचन एवं योग का निरोध कर लिया हो। इस अवस्था में काया को छोड़कर शेष भाग निष्क्रिय हो जाते हैं। यह ध्यान तेरहवें गुणस्थानवर्ती को ही होता है।

(द) व्युपरतक्रिया निवृत्ति-तीन योग से रहित होने पर यह चतुर्थ ध्यान होता है। इस अवस्था में काया भी निःशेष हो जाती है। साधक सिद्ध अवस्था प्राप्त कर लेता है। चौदहवें गुणस्थान में यह ध्यान होता है। पूर्ण क्षमा, पूर्ण मार्दव आदि गुणों के कारण यह अवस्था प्रकट होती है।

शुक्लध्यान के चार लक्षण

(१) अव्यथम-व्यथा का अभाव होना।

(२) असंमोह-मूच्छित अवस्था न रहना, प्रमादी न होना।

(३) विवेक-बुद्धि द्वारा आत्मा को देह से पृथक् एवं आत्मा से सर्व संयोगों को अलग करना।

(४) व्युत्सर्ग-शरीर एवं अन्य उपाधियों का छूट जाना।

शुक्लध्यान के चार आलम्बन

(१) क्षमा, (२) मुक्ति (निर्लोभता), (३) आर्जव (सरलता) एवं (४) मृदुता (विनम्रता) ये चार शुक्लध्यान के आलम्बन है।

शुक्लध्यान की चार अनुप्रेक्षाएं

(१) अनन्तवर्तिता-जीव आदि अनादि है, अनन्त योनियों में भटका है और अभी तक इस संसार से इसकी मुक्ति नहीं हो सकी है। यह जीव चारों गतियों (नरक, तिर्यंच, मनुष्य, देव) में चक्कर लगाता रहा है। ऐसा विचार अनन्तवर्तिता में है।

(२) विपरिणामानुप्रेक्षा-अधिकांश परिणाम विपरिणाम है। पदार्थों की विभिन्न, अवस्थाएं प्रतिपल विपरिणामों में घटित हो रही है।

(३) अशुभानुप्रेक्षा-जो शुभ नहीं वह अशुभ है। जो उत्तम नहीं वह अपवित्र है। अशुद्ध शब्द ही अशुभता का परिचायक या वाचक है।

(४) अपायानुप्रेक्षा-मन-वचन-काया के योग के आस्रव के द्वारा ही इन योगों को अशुभ से शुभ की ओर प्रवृत्त करना अपायानुप्रेक्षा है।

ध्यान के विषय में उपर्युक्त विवरण अत्यन्त संक्षेप में वर्णन किया गया है। ध्यान के सम्बन्ध में विस्तृत विवेचन निर्युक्ति, चूर्णि, भाष्य, आगम तथा आगमेतर ग्रंथों में प्राप्त होता है, इसके अतिरिक्त विद्वान आचार्यों ने भी ध्यान के सम्बन्ध में बहुत लिखा है जिससे ध्यान विषयक सूक्ष्म ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।

भगवान महावीर की साधना-मौन, ध्यान एवं कार्योत्सर्ग

आत्मसाक्षात्कार के लिए ध्यान ही एकमात्र उपयुक्त साधन है। भगवान ने ध्यान की निर्बाध साधना के लिए आत्मदर्शन का अवलम्बन लिया। भगवान महावीर ने सालम्बन और निरावलम्बन दोनों ही प्रकार के ध्यान का प्रयोग किया। वे एक प्रहर तक अनिमेष दृष्टि से ध्यान करते रहे, इससे उनका मन एकाग्र हुआ। ध्यान के लिए भगवान नितान्त एकान्त स्थान का चयन करते हए खड़े होकर तथा बैठकर दोनों ही स्थितियों में ध्यान करते थे। पद्मासन, पर्यंकासन, वीरासन, गोदोहिकासन तथा उत्कटिका इन्हीं आसनों पर ध्यान सम्पन्न किया। भगवान यह बात अच्छी तरह जानते थे कि वाक् और स्पंदन का परस्पर गहरा सम्बन्ध है। इसीलिए ध्यान से पूर्व मौन रहने का संकल्प कर लेते थे। कायिक, वाचिक, मानसिक जिस ध्यान में भी लीन होते, उसमें रहते थे। द्रव्य या पर्याय मुद्रा बड़ी प्रभावशाली होती थी। एक स्थान पर आचार्य हेमचन्द्र लिखते है-भगवान तुम्हारी ध्यान मुद्राएं कमल के समान शिथिलीकृत शरीर और नासाग्र पर टिकी हुई स्थिर आंखों में साधना का जो रहस्य है वह सबके लिए अनुकरणीय है।

पेढाल ग्राम के पलाश नामक चैत्य में एक रात्रि की प्रतिमा की साधना की। तीन दिन का उपवास प्रारम्भ में किया। तीसरी रात की कायोत्सर्ग करके खड़े हो गये। दोनों पैर सटे हुए थे और उनसे सटे हुए हाथ नीचे की ओर झुके हुए थे। स्थिर दृष्टि थी। किसी एक पुद्गल (बिन्दु) पर स्थिर और स्थिर इन्द्रियों को अपने-अपने गोलकों में स्थापित कर ध्यान में लीन हो गये।

सामुसट्ठिय ग्राम में भद्र प्रतिमा की साधना प्रारम्भ की। उन्होंने कार्योत्सर्ग की मुद्रा में पूर्व-उत्तर-पश्चिम-दक्षिण चारों दिशाओं में चार-चार प्रहर तक ध्यान किया। इस प्रतिमा में उन्हें अत्यन्त आनन्द की भी प्रतीति हुई थी और इसी श्रृंखला में महाभद्र की साधना की। चारों दिशाओं, चारों विदिशाओं, ऊर्ध्व और अधः दिशाओं में एक-एक दिन-रात तक ध्यान करते रहे। इस प्रकार सोलह दिन रात तक निरन्तर ध्यान प्रतिमा की साधना की।

ध्यान की परम्परा अक्षुण्ण है। वेदों का प्रसिद्ध गायत्री मंत्र मन्त्र ध्यान की ओर ही संकेत करता है।

श्वेताश्वतरोपनिषद् (१.११) में आत्मा को ज्ञानवान् माना गया है। और उसकी मुक्ति क्लेशों के क्षीण होने से होती है। परन्तु कैवल्य की प्राप्ति तो ध्यान करने से ही होती है।

योगिराज अरविन्द के अनुसार हृदय चक्र पर एकाग्रता से ध्यान करने पर हृदय चैत्य (चित्त में स्थित) पुरूष के लिए खुलता है। अरविन्दाश्रम की मां ने लिखा है, 'हृदय में ध्यान करे, सारी चेतना को बटोरकर ध्यान में डूब जाये इससे हृदय में स्थित ईश्वर का अंश जाग उठेगा। और हम अपने को भक्ति-प्रेम शान्ति के अगाध सागर में पायेंगे।'

भ्रूमध्य पर एकाग्रतापूर्वक ध्यान करने से मानसिक चक्र उच्चतर चेतना के लिए खुल जाता है। उच्चतर चेतना विकसित होने से अहं का विलय होता है। आत्मा की दिव्य अनुभूति से हमारा तारतम्य (सम्पर्क) हो जाता है।

महर्षि रमण के अनुसार यदि आप ठीक से ध्यान करते है तो परिणामस्वरूप एक अलौकिक विचारधारा उत्पन्न होगी और वह धारा आपके मन में निरन्तर प्रवाहित होती रहेगी चाहे आप कोई भी कार्य करें। इसीलिए महर्षि रमण कर्म और ज्ञान में कोई तात्विक भेद नहीं मानते।

श्रीमद्भागवत में कृष्ण ने अपने प्रिय भक्त उद्धव को ध्यान की विधि बताते हुए कहा है-

कर्णिकायां न्यसेन् सूर्य सोमग्नीनुत्तरोत्तरम्।
वन्हिमध्ये स्मरेद्रूपं ममे तद् ध्यान मंगलम्।।

अर्थात् हृदय कमल को ऊपर की ओर लिखा हुआ वाला बीच की कली सहित चिन्तन करें और उस कली में क्रमशः सूर्य, चन्द्र और अग्नि की भावना करें और अग्नि के मध्य में मेरे रूप का ध्यान करें। यह ध्यान अति मंगलमय है।

कुछ साधक अनाहत चक्र पर द्वादश दलात्मक रक्तकमल का और उसके मध्य में क्षितिज पर उदय होते हुए सूर्य का ध्यान करते है।

यह सब विवेचन अत्यन्त संक्षिप्त है। निर्युक्ति, चूर्णि, भाष्य, आगम तथा आगमेतर अन्य ग्रन्थों में ध्यान के सम्बन्ध में प्रचुर सामग्री प्राप्त होती है। अधिकारी पुरूषों को उक्त ग्रंथों का स्वाध्याय अवश्य करना चाहिए तथा ध्यान के अमोघ लाभ अवश्यक प्राप्त करने चाहिए।

जह डज्झइ तणकट्ठं जालामालाउलेण जलणेण।
तह जीवस्स वि डज्झइ कम्मरयं झाण जोएण।।

- कुवलयमाला

जिस तरह तृण या काष्ठ को अग्नि की ज्वाला जला डालती है वैसे ही ध्यानरूप अग्नि से जीव कर्मरज को भस्म कर देता है।

Basic Principles of Preksha Meditation

Mukhya Niyojika Sadhvi Vishrut Vibha

Basic principle

Since perception is the key to this meditation technique, it is known as Preksha Meditation. Preksha means to perceive and Dhyan means meditation. The word preksha is derived from the root *iksha*, which means to see. When the prefix *Pra* is added, it becomes *Pra+iksha* which now means to perceive carefully and profoundly being free from attachment and aversion. In the technique, one has to observe the internal phenomenon of the body. In the beginning a person observes the states of the gross body, then the phases of the *tajjas sharir* (the electrical body). followed by the vibrations in the *karma sharir* (the micro body). At a more advanced stage of the meditation process, the practitioner may succeed even in witnessing his past life. Thus while progressing through the gross to the subtle bodies, the art of visualizing ones own self may be acquired.

'Sampikkhae Appagamappaenam' this aphorism from the Jain canon *Dasaveaaliyam* forms the basic principle for Preksha Meditation. It means, 'See yourself through yourself.' Perceive and realize the most subtle aspects of consciousness through your own conscious mind.'

Acharya Siddhasen (6th Cent. A.D.) wrote, 'Let us observe the state of our body, perceive the form of our mind. Let us sit in meditation and observe the different states of our body.' Thousand of different kinds of changes occur in our body and to witness all these changes with inner eye is called the perception of self through self.

Basic components

In order to achieve perfection in the technique of Preksha Meditation, one has to pass through various stages. The basic components of Preksha Meditation are:

- Kayotsarg (relaxtion)
- Antaryatra (internal trip)
- Shvas Preksha (perception of breathing)
- Sharir Preksha (perception of physical body)
- Chaitanya Kendra Preksha (perception of psychic centers)
- Leshya Dhyna (Pereception of psychic colour)
- Anupreksha (contemplation)
- Chanting of Mantras (mantra meditation)

Supporting components

- Asana (yogic exercise)
- Pranayam (restraining the breath)
- Mudra (Posture)
- Dhvani (Sound)

Advanced components

- Vartamaan Kshan ki Preksha (perception of the present moment)
- Vichaar Preksha (Perception of thought)

Animesh Preksha, Traatak (focusing on a single point with open eyes without blinking)

STRESS AND SORROW

Acharya Mahapragya | A.P.J. Abdul Kalam

Joy and sorrow are the two words on the basis of which a man's personality can be analysed. They depend on a man's actions, thought processes and his inclinations. To make this clearer, one should know that there are four types of sorrow: physical sorrow, mental sorrow, emotional sorrow and karmic sorrow.

Physical sorrow is so interconnected with the other three that it cannot be fully defined without referring to them. It makes up the largest part of the sorrow that we feel in day-to-day life. In today's world of technology subjected to tremendous stress and tension. The biggest problem that man faces today is that he is continually over-pressurized, he is always restless, and this leads to stress. Modern man has become a 'patient of the mind'. This has resulted in a rise in the number of people who, at a very young age, suffer from hypertension, heart ailments and high blood pressure.

Anicient medicine classifies diseases into two types; those caused by external agents and those produced by internal agents. According to Ayruveda, the imblance of internal agents, like vata (air), pitta (bile) and kapha (phlegm), stimulate disease. According to naturopathy, the accumulation of toxins in our system make us unhealthy. According to Jain philosophy, karma-the imprint of deeds done in the previous birth-becomes the cause of pain and illness.

STRESS AND ITS MECHANISM

Man's life, set to an incredibly fast pace, has become a mere rat race. He keeps running after one thing or the other. Quick and fast actions create a stressful condition.

Any condition that needs behavioural adjustments is termed as a stressful condition. Dr. Hans Selye, an international authoity on stress, defines stress as 'the rate of wear and tear of the body'. He shows that cold, heat, rage, drugs, excitement, pain, grief and even joy activate the stress mechanism in the same way. If the stress is physical-such as excessive cold-the skin density and the breathing change, the blood vessels at the surface contract. Whenever one encounters a psychologically stressful situation, an elaborate innate mechanism is automatically put into action. This mechanism involves :

- Hypothalamus-the remarkable part of the brain which integrates all the functions of the body which are not normally controlled by the conscious mind.
- Pituitary gland-called the master of the endcrine system because it regulates other glands.
- Adrenal gland-which secretes adrenalin and other hormones to keep the body tense and alert.
- The sympathetic component of the autonomic nervous system whose reponsibility is ultimately to prepare the body for the 'fight-or-flight' reponse.

The psychological conditions which are brought about by the integrated action of the above are :

- The blood supply to the digestive system is curtailed; digestion is slowed down or halted.
- The salivary glands dry up.

- The respiration rate increases, the breathing becomes faster or comes in gasps.
- The liver releases some of the store of blood sugar which is carried to the muscles of the arms and the legs.
- The heart beats faster to pump more blood where it is most needed, and the blood pressure rises.

All these and many other complex changes occur to generate extra quantities of the electrochemical and hormonal engergy which enable us to act quickly. The energy goes to the muscles even when there is nothing that needs to be done, and energy bounds up in the muscles as tension. When the emergency conditions have subsided, we have what is needed to bring us back to a balanced, tensionless state. It is the concern of the other component of the autonomic nervous system-the parasympathetic-to resume normal activity and restore peaceful conditions. The parasympathetic nervous system is designed to work in close harmony and balance with the sympathetic nervous system. The activation of the parasympathetic is meant to happen naturally after the emergency is over. Its response is to balance the sympathetic by returning the biochemistry to normal and by relaxing the tense muscles. The sympathetic nervous system is action-oriented and aggressive;the parasympathetic nervous system is restorative and passive. When both function normally, there is a see-saw action which reflects in our body as rhythmic cycles of action and rest. When the equilibrium breaks down, there is a dangerous tension. Since modern lifestyles always keep up on the go, the restoring apparatus-the parasympathetic nervous system-seldom gets a chance to operate fully. That is, our muscles and nerves hardly ever return to their natural condition.

DISORDERS CAUSED BY STRESS OR TENSION

All animals, including human beings, possess this innate mechanism and its response which prepares one for fight or flight is involuntary. If a stressful situation

मनुष्य में जितनी क्षमता होती है, उसका उतना उपयोग नही होता।
इसका एक कारण है संकल्प का अभाव। - आचार्यश्री महाश्रमण

श्रद्धावनत

प्रकाश बरड़िया (पारस), रीता, पीयूष, अमन
(हैदराबाद-सरदारशहर)

recurs regularly, the stress mechanism gets repeatedly activated. If the psychological conditions described above persist over a long time or recur frequently, serious disorders can occur. Thus, if the blood pressure remains high and the blood vessuls get constricted, the result will be a heart attack or a stroke; if the reduced blood pressure remains high and the blood vessesl get constricted, the results will be a heart attack or a stroke; if the reduced blood supply to the stomach is prolonged, there will be digestive disorders; if the breathing continues at a high rate, it may result in asthma. Sustained muscle tension will cause aches and pains in the head, back, neck and shoulders. Besides this, the chronic tension may also bring on feelings of panic and irrational fear which could be frightening even crippling. The modern man, tense, nervous and anxious, is driven inexorably into stress because his constant state of anxiety prevents him from coping with the relentless demands of today's life. There is plenty of evidence now to show that tension may play a significant part in promoting or triggering a great many illnesses. If we want to successfully solve the problems of stress, we have to find a way of allowing the parasympathetic nervous system to funtion efficiently, so that it can re-establish the equilibrium and harmony which has been destroyed.

CURE IS ALSO INHERENT

Modern lifestyles are most unlikely to change for the better. Sure, we have developed pharmaceutical wonder drugs in the form of tranquillizers, which give temporary relief. In the long run, however, the medicine itself creates more serious problems than the original disease. The question is;Are we then destined to be doomed by our environmental conditions or are we capable of adapting ourselves so as to avoid, at least, the more injurious effiects of daily stress?

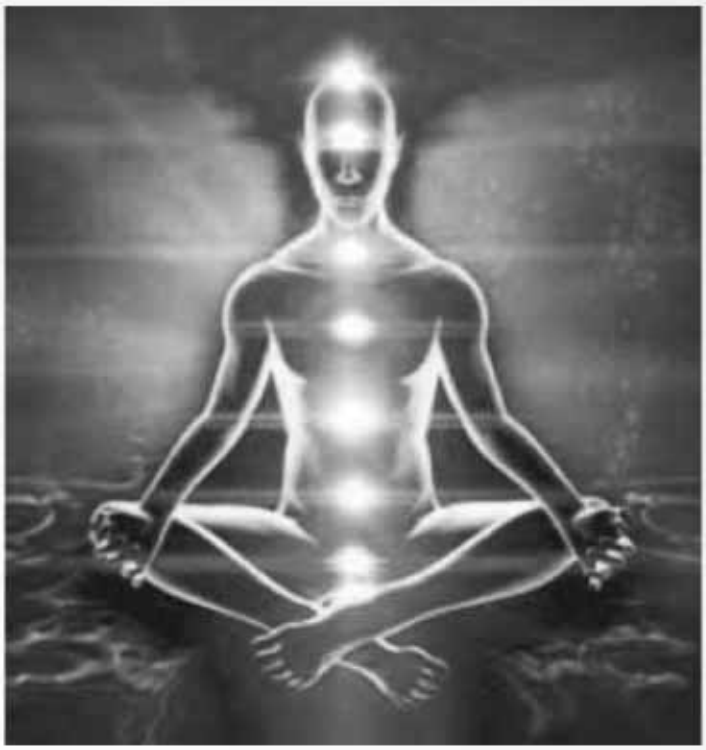

Fortunately, we also possess an inner mechanism which produces physiological conditions, which are diametrically opposite to the fight-or-flight response. Swiss physiologist Walter Rudolph Hess, winner of the 1949 Noble Prize in Physiology, desribed its reponse as a protective mechanism against overstress promoting restorative processes, and called it a 'trophotropic response'. Herbert Benson., M.D., has termed this reaction 'relaxation response'.

It is possible to train ourselves to activate the protective mechanism and to influence our reactions to stress. The increased secretion and output of adrenaline can be normalized and the sympathetic dominance counter-balanced by an increased parasympathetic activity. Regular parctice of kayotsarga is a potent remedy for the dangerous diseases of modern times.

RELAXATION

Kayotsarga is a from of relaxation which is a direct and harmless way of relaxing. One cannot hope to enjoy

VAISHNODEVI
LUSH GREENS
BUILDERS | DEVELOPERS | PROMOTERS

Regd. Office
Vaishnodevi Lush Greens Pvt. Ltd.
#459, 4th Floor, 12th Main
M. C. Layout, Near Vijayanagar Post Office
Vijayanagar
BANGALORE-560040 (Karnataka)
Ph.: 23146429, M.: 9620799999, e-mail: vimalkataria9@gmail.com

Rekha Jewellers
#1025, 8th Cross, K. R. H. Road
Sai Complex, Ashoka Road, Mysore

Shailbhadra Jewellers
#1328, 7th West Cross
Ashoka Road, Mysore

With Best Wishes From
Vimal Kataria (MD)
Madhu Kataria

Manoharlal, Praveenkumar, Janak, Yogesh
Vimal, Vikas, Vishal, Vinay, Gourav
Chirag, Manav, Yash Kataria (Bemali)

KATARIA

either health or happiness so long as one is under the insidious influence of tension in spite of possessing the amenities and luxuries of life. Anybody who, after learning the technique, practises systematic. relaxation for thirty to forty-five minutes, will remain relaxed and unperturbed in any situation.

When we sleep, our nerves and muscles are in a relaxed position. When we rest, there is a weak nerve impulse and the muscles are in a quiescent state. When we move or are engaged in some physical activity, the nerve impulse increases and the muscles contract. All the three states described above normally occur many times a day. The fourth state-abnormal yet frequent-is the state of hypertension. Perpetually tightened jaws, clenched teeth, frowning brows and hardended abdominal muscles are some of the visible signs of the state. In this state, a strong nerve impulse is generated, leaving the muscles in an unneccessary permanent contraction.

With conscious and voluntary actions, it is possible to switch off this impulse to the muscles which is more efficient than sleep. Sleep is seldom rereshing. In kayotsarga, the flow of impulse is reduced to nil and the output of energy to the minimum. It is so effective that it can relieve tension and fatigue more effectively in half an hour than many hours of indifferent sleep can. However, it cannot be achieved by force, constraint or violence. It is an exercise of the mastery of the conscious will over the body by the technique of auto-suggestion. With its help, one can remain relaxed under the most exasperating conditions. Kayotsarga is a form of faith healing where the patient himself controls the process, relaxing each body part in turn by coaxing auto-suggestion.

Kayotsarga helps counteract the sympathetic dominance. This alleviates other emotional aspects, like mitigating various anxiety states and treating some cardiac problems. A cessation of the unnecessary voluntary movements of body and speech brings about discipline in the sense organs.

According to Jain philosophy, the gross physical body is the medium for the perception of suffering or its manifestation but not its root cause. The root cause is the most subtle body called karma sharir-the coded record of one's past deeds. It is reponsible for motion, agitation and tension caused in daily life. Kayotsarga is actually a process for searching and finding the root of all miseries and sufferings. In the state of kayotsarga, one is able to detect and identify the root cause of mundane suffering. And once this truth is known, there is a fundamental change in the attitude towards the gross body. Kayotsarga is the first war against the enemy-karma sharir. It helps one reach the state of self-awareness, where the journey to self-realization commences.

उतना और वही मिलेगा, जितना और जो तुम्हारे भाग्य में है।
न कम मिलेगा न ज्यादा फिर व्यर्थ चिन्ता क्यों करते हो। - आचार्यश्री महाश्रमण

श्रद्धावनत

टीकमचंद, महावीरचंद, हंसराज, राजेश, अभय, अनिल बेताला

(छोटी खाटू-भागलपुर-दिल्ली-जोधपुर-जयपुर)

आचार्य महाश्रमण के उद्‌बोधन

ज्ञान के क्षेत्र में गहराई तक जायें

आदमी को अग्र और मूल का विवेचन करना चाहिए। आदमी अग्र को जानने और मूल तक पहुंचने का प्रयास करे तो किसी भी समस्या का समाधान किया जा सकता है। आदमी सतही तौर पर कोई जानकारी कर ले, उसके बावजूद उसके मूल भाग को जाने बिना वह वास्तविकता से दूर रह सकता है। आदमी को ज्ञान के क्षेत्र में गहराई तक जानने का प्रयास करना चाहिए। आदमी जितनी गहराई तक ज्ञानार्जन कर सकता है, वह उस विषय का विशेष ज्ञाता बन सकता है। आचार्यश्री ने लोगों को राग-द्वेष से मुक्त जीवन जीने की मंगल प्रेरणा प्रदान की। आचार्यश्री ने बोलपुरवासियों को विशेष आशीर्वाद प्रदान करते हुए कहा कि आज बोलपुर में आना आचार्य तुलसी के आगमन की पुनरावृति हो गई।

बुद्धों और तीर्थंकरों का आधार शान्ति

शांतिदूत आचार्य महाश्रमण ने शान्तिनिकेतन (पश्चिम बंगाल) में कहा कि सभी बुद्धों और तीर्थंकरों का आधार शांति है। आचार्यश्री ने विश्व शांति शब्द के अर्थों की व्याख्या करते हुए कहा कि विश्व का प्रसिद्ध अर्थ है-दुनिया, संसार। विश्व का दूसरा अर्थ है-समस्त, संपूर्ण। संसार में शांति आवश्यक है। एक देश का दूसरे देश के साथ मैत्री संबंध होना चाहिए। सीमा पर सैनिकों की तैनाती एक उपचार मात्र हो कभी उनका उपयोग न करना पड़े, ऐसी शांति स्थापित करने का प्रयास होना चाहिए। देशों का शक्ति सम्पन्न बनना एक बात, किन्तु वह किसी दूसरे देश का विनाश करने वाला न बने, ऐसा प्रयास होना चाहिए। सीमाओं पर शांति रहे, इसका प्रयास होना चाहिए। पूरा विश्व एक परिवार के रूप में देखने का प्रयास हो। यह मेरा और यह पराया छोटे विचार वालों का हो सकता है। उदार चित्त व चरित्र वाला पूरे विश्व को अपना परिवार मानता है। विश्वशांति का आधार सूत्र है-पूरे विश्व के साथ मैत्री का भाव और संबंध रहे। सब सुखी ही, सबका कल्याण हो, लोगों में संपूर्ण शांति रहे।

विषयों की आसक्ति से बचें

इन्द्रिय और मन के विषय में राग उत्पन्न होने से आदमी दुःखी हो सकता है। विषय युक्त सुख प्राप्ति की आकांक्षा आदमी के दुःख का कारण बन सकती है। जो राग भाव से मुक्त हो वीतरागी हो गए उन्हें राग कष्ट नहीं दे सकते। आदमी के जीवन को पदार्थ सापेक्ष बताते हुए आचार्यश्री ने कहा कि आदमी को जीवन में पदार्थों का सहयोग लेना पड़ता है। पदार्थ निरपेक्ष जीवन तो संभव नहीं हो सकता, किन्तु पदार्थों का उपभोग करते हुए भी उसके प्रति अनासक्त रहना या आसक्ति से दूर रहने का प्रयास करना चाहिए। कोई आदमी विषयों में आसक्त हो जाए तो वह किसी की सेवा या अपने कार्यों का उचित निष्पादन नहीं कर सकता। राजा यदि विषयों में आसक्त हो जाए तो वह जनता की भला क्या सेवा कर सकेगा। वर्तमान में तो मुख्यमंत्री, प्रधानमंत्री आदि-आदि जनता की सेवा का दायित्व संभालने वाले होते हैं तो उन्हें भी विषयों की आसक्ति से बचने का प्रयास करना चाहिए। आदमी पदार्थों का भोग करे, किन्तु उसके पीछे आसक्त न हो, ऐसा प्रयास करना चाहिए। सामान्य आदमी में पदार्थों के प्रति आकर्षण होता है और वह पदार्थों का मोह भी कर सकता है। आदमी को मोह छोड़ अमोह की साधना करने का प्रयास करना चाहिए। मोह दुःख का कारण तो अमोह की साधना मोक्ष के द्वार तक ले जाने वाली बन सकती है। आदमी को पदार्थों से ज्यादा मोह नहीं करना चाहिए और अपने इस शरीर के माध्यम से अपनी आत्मा का कल्याण करने का प्रयास करना चाहिए।

भोजन के समय संयम रखें

आदमी को भोजन में ज्यादा रसों का सेवन नहीं करने का प्रयास करना चाहिए। ज्यादा गरिष्ठ भोजन उन्माद पैदा करने वाला हो सकता है। इसलिए आदमी को गरिष्ठ भोजन करने से बचने का प्रयास करना चाहिए। साधना के क्षेत्र में भोजन संयम का महत्त्वपूर्ण स्थान है। भोजन में अल्पता या उनोदरी रखना भी भोजन की साधना का एक अंग है। मनोज्ञ पदार्थ सामने हो और आदमी उसका त्याग कर दे तो वह भी भोजन संयम की साधना है। भोजन करते समय आदमी को संयम रखने का प्रयास करना चाहिए। आदमी को जिह्वा के स्वाद को संयमित करने का प्रयास करना चाहिए। गृहस्थ सूर्यास्त से सूर्यास्त तक कुछ न खाने-पीने का संकल्प कर ले तो बहुत अच्छा लेकिन यह न संभव हो तो कम से कम दस बजे के बाद भोजन न करने का संकल्प रखने का प्रयास होना चाहिए। आदमी को भोजन की न तो अत्यधिक प्रशंसा करनी न चाहिए और न ही निंदा। पूर्वकृत कर्मों को क्षीण करने के लिए देह धारण करने वालों के लिए शरीर को पोषण देने के लिए भोजन करना आवश्यक है।

विद्याअर्जन में ध्यान लगाना चाहिए

व्यवहारिक जीवन में भाषा का महत्त्वपूर्ण स्थान है। भाषा के द्वारा आदमी एक-दूसरे से अपने विचारों का विनमय करता है। अपनी बात दूसरों को बताने व समझाने में भाषा का विशेष योगदान होता है। भाषा न हो तो विचार संप्रेषण में मुश्किलें हो सकती हैं या बाधा उत्पन्न हो सकती है। आचार्यश्री ने विद्यार्थियों को भाषा के गुण और दोष का वर्णन करते हुए कहा कि भाषा विचारों के संप्रेषण का माध्यम है, किन्तु इसमें गुण और दोष दोनों हैं। आदमी को इसके दोष से बचने का प्रयास करना चाहिए। भाषा का पहला दोष 'वाचालता' को बताते हुए आचार्यश्री ने कहा कि ज्यादा बोलना भाषा का दोष है। बिना पूछे बोलना, निरर्थक बोलना भाषा का दोष है। वाचालता के कारण आदमी में लघुता आती है। आदमी को परिमित भाषी बनने का प्रयास करना चाहिए। जहां आवश्यकता हो, जहां कोई बोलने को कहे, वहां बोलने का प्रयास करना चाहिए। आदमी को मौन भी रहने का प्रयास करना चाहिए। विद्यार्थियों को विद्या अर्जन में ध्यान लगाना चाहिए। ज्यादा बातों में रस नहीं लेना चाहिए। भाषा का एक और दोष 'झूठ बोलना' होता है। इसलिए आदमी को झूठ से बचने और सत्य बोलने का प्रयास करना चाहिए। झूठ भाषा का दोष तो सत्य भाषा का गुण होता है। इसलिए आदमी को सत्य बोलने का प्रयास करना चाहिए।

पाप कर्मों का जिम्मेदार मोह

दनियावां, पटना (बिहार): हमारी आत्मा संसार में परिभ्रमण कर रही है। इसका कारण है कर्म। आत्मा कर्म से बंधी होने के कारण संसार में बार-बार जन्म लेती है और मृत्यु को प्राप्त होती है। राग और द्वेष कर्म बंध का बीज होता है। राग और द्वेष भाव के कारण आदमी पाप करता है और अपनी आत्मा को कर्मों से भारित करता है। कर्मों से बंधी आत्मा ही संसार में बार-बार जन्म लेती है और मृत्यु को प्राप्त होती है। जन्म-मृत्यु को दुःख कहा जाता है। पाप कर्मों का जिम्मेदार मोह होता है। मोह राजा तो राग और द्वेष उसके सेनापति हैं। मनुष्य कभी राग तो कभी द्वेष में चला जाता है। अनुकूल स्थिति में राग भाव में तो प्रतिकूल परिस्थिति में द्वेष भाव में चला जाता है। इसके कारण आत्मा कर्मों के बंधन में बंध जाती है और जन्म-मृत्यु रूपी दुःख को बार-बार प्राप्त होती है। आदमी राग-द्वेष मुक्ति की साधना करे तो मोक्ष मार्ग को प्राप्त कर सकता है।

जीवन उत्सव है

मुनि सुधाकर

फूलों से तुम हंसना सीखो, भवरों से तुम गाना।
वृक्षों की डाली से तुम सीखो, फल आए झुक जाना।।

कवि के ये पंक्तियां संदेश देती है। यदि सीखने की ललक और ज्ञान की प्यास हो तो व्यक्ति छोटे-छोटे पदार्थ, छोटी-छोटी बातें जो हमारे दैनिक जीवन का हिस्सा है, उनसे भी सीखकर जीवन को कलापूर्ण और उत्सवमय बना सकता है। जीवन उपहार है, इसे भार नहीं बनने दें। हमारे सांस-सांस में जीवन उत्सव है, उपहार है का स्वर झंकृत होना चाहिए। हम बचपन से सुनते आये है-मनुष्य जीवन बहुत कीमती है लेकिन कीमत का अंकन तो तब होता है, जब जीवन को सार्थक दिशा देते हुए उसे उत्सव का पर्याय बना दें। जीवन को उत्सव बनाने का मंत्र है-चीनी (नहंत)। हम प्रतिदिन चीनी का अनेक पदार्थों के साथ सेवन करते है पर चीनी का गुण और संदेश की ओर हमारा ध्यान कम ही जाता है। चीनी में छुपे गुण जीवन के उपवन में महक उठे तो जीवन उत्सव बन जाता है। चीनी के तीन गुण हमें जीवन प्रबंधन के मंत्र भी सिखाते है। चीनी के गुण है-१. उज्जवलता, २. मधुरता, ३. मिलनसारिता।

उज्जवलता

चीनी का पहना गुण है-उज्जवलता। जीवन को उत्सव बनाने के लिए उज्जवलता का विकास जरूरी है। जिसके जीवन में नैतिक मूल्यों के प्रति आस्था और प्रतिबद्धता का भाव नहीं होता, वे कभी सच्चे आनन्द का अनुभव नहीं कर सकता। प्रसन्नता का आधार पवित्रता है। एक अंग्रेज लेखक ने लिखा है कि आज हर व्यक्ति का ध्यान पांच "P" पर केन्द्रित है।

1-P-Power	-	सत्ता
2-P-Prosperity	-	समृद्धि
3-P-Pleasure	-	भौतिक सुख
4-P-Position	-	पद
5-P-Prestige	-	प्रतिष्ठा

व्यक्ति को अधिकार है कि वह इन पांच "P" से अपने जीवन को समृद्ध बनाए किन्तु जीवन को उत्सव बनाने के लिए उसके साथ एक "P" का और जुड़ना जरूरी है च वह चनतपजल है -पवित्रता। पवित्रता के अभाव में समृद्धि भी पतन और विनाश का कारण बन जाती है।

एक मां ने कठिनाइयों से झूंजते हुए अपने बेटे को सी.ए. (चार्टर्ड अकाउंटेंट) बनाया। बेटा भी अपनी मां के प्रति कृतज्ञता व आस्था का भाव रखता। वह जानता था, मुझे पढ़ाने के लिए न जाने मेरी मां ने दूसरों के घरों में कितने बर्तन मांझे और कपड़े धोए होंगे। एक बार उसे अनैतिक कार्य करने के लिए लाखों रूपये मिलने का प्रस्ताव मिला। उसने प्रस्ताव देने वाले को कहा, कल मैं सोच के बताऊंगा। रात्रि के समय उसने अपनी मां के सामने उस प्रस्ताव की चर्चा की। मां ने बेटे के सिर पर हाथ रखते हुए कहा-बेटा मैं नहीं जानती, क्या होता है ऑडिट, क्या होता है टैक्स, पर इतना जानती हूं कि मैं वह दिन नहीं देखता चाहती कि सुबह मैं तेरे कमरे में उठाने के लिए आऊ और तुम मुझे जागते हुआ मिलो। आप समझ चुके है कि बेइमानी हमें आराम से नींद भी नहीं लेने देती है। मां की बात सुनकर बेटे ने उस प्रस्ताव को ठुकरा दिया। कहानी सबक सिखाती है जीवन को उत्सव बनाने के लिए नैतिक व चारित्रिक मूल्यों के प्रति दृढ़ आस्थावन रहना जरूरी है। "Honesty is the best way of life" ईमानदारी जीवन जीने का सर्वोत्तम तरीका है। हमेशा तन-मन की पवित्रता बनी रहे उसके लिए हमें प्रतिपल जागरूक रहना चाहिए।

मधुरता

चीनी का दूसरा गुण है-मधुरता। चीनी को किसी में मिलाया जाये, वह कभी भी अपनी मिठास नहीं छोड़ती है। उसी प्रकार जीवन को उत्सव मनाने के लिए आप किसी के भी साथ रहे, वाणी की मिठास हमेशा बनाएं रखें। जीवन की मधुरता हमारे शब्दों पर निर्भर करती है। हमारे शब्द जितने मधुर होंगे, हमारे संबंध उतने ही मधुर बनेंगे। वाणी को बाण नहीं वीणा बनाये। 'ग' से गधा भी होता है गणेश भी, 'स' से सत्य भी होता है सत्यानाश भी, 'प्र' से प्रहार भी होता है प्रणाम भी। यह हम पर निर्भर करता है कि हम शब्दों का चयन और प्रयोग कैसे करते है। एक व्यक्ति किसी के घर पर छाछ लेने गया। उसने बुढ़िया से छाछ मांगते हुए कहा-"ए बाई बाड़ी, छाछ देजी जाड़ी"। बुढ़िया ने उसी भाषा में उत्तर देते हुए कहा-जीसी थारी वाणी विसो छाछ में पाणी। एक देवर ने अपनी भाभी से कहा ऐ काणी भाभी पाणी पिला, भाभी ने कहा-कुत्ते को पानी पिला दूंगी पर तूझे नहीं। कुछ देर बाद छोटा देवर आया उसने प्यार भरे शब्दों में कहा-प्यारी भाभी पानी पिलाओं। भाभी ने कहा-बैठो पानी क्या पान का शरबत बनाकर लाती हूं। जैसे शब्द हम बोलते है वही शब्द लौटकर वापस हमारे पास आते है। याद रखें-जी कहो जी कहलाओ।

वातावरण ऐसा हो कि आदमी देख आदमीयत में ढल जाये
सच्चाई का चबूतरा ऐसा हो जिस पर हर दोष फिसल जाए
तुम चाहे कम बोलो, कोई बात नहीं, मगर बोलो तो
ऐसा बोला की सुनकर दुश्मन का दिल भी पिघल जाये।

3. मिलनसारिता

चीनी का तीसरा गुण है-मिलनसारिता। "चीनी तेरा रंग कैसा जिसमें घुल जाये वैसा"। चीनी को तरल या ठोस, गर्म या ठण्डा जिसमें मिलाया जाता है वह उसमें घुल-मिल जाती है। चीनी का यह गुण जीवन प्रबंधन का महान सूत्र है। जीवन के लम्बे सफर में न जाने कितने लोगों के साथ हमारा व्यवहार होता है। यदि हमारा स्वभाव मिलनसार है तो हम सब के साथ सामजस्य और समन्वय बिठा सकते है। परिवार में भी नाना प्रकार की रूचि वाले सदस्य होते है जरूरी नहीं सबके विचार एक जैसे हो पर चीनी का यह गुण हमें सिखाता है मतभेद होते हुए भी मन का भेद नहीं हो। मिलनसारिता यानि अनेकता में भी एकता का अनुभव। हमारा शरीर मिलनसारिता का अद्‌भुत उदहारण है-दर्द अंगुली में होता है आंसू आंख से निकलता है तब उस आंसू को पोछने के लिए वही अंगुली उठती है। एक और एक शून्य भी होता है। एक और एक दो भी होते है। एक और एक ग्यारह भी होते है यह हमारे पर निर्भर है शून्य बनाते है या दो बनाते है या ग्यारह बनाते है। एक बार नौ ने आठ को थप्पड़ मारा, आठ ने गुस्से में आकर सात को थप्पड़ मारा, सात ने छः को, छः ने पांच को, पांच ने चार को, चार ने तीन को, तीन ने दो को, दो ने एक को थप्पड़ मारा। एक समझदार, चिन्तनशील व मिलसार था उसने शून्य को थप्पड़ मारने के बजाय उसे प्यार से उठाया और अपने पास बिठा लिया। जैसे ही एक के पास शून्य आया एक की ताकत दस गुण बढ़ गई। याद रखें-जब जीवन में मिलनसारिता का गुण साकार होता है तब हमारा जीवन भी शक्ति और उत्सव का पर्याय बन जाता है।

सफलता के साथ दुश्मन

अहं की भावना

अहंमन्यता की भावना सफलता की दुश्मन है। अहं की भावना विकास की गति को मंद कर देती है। अहंकार जिज्ञासा भाव को अंकुरित ही नहीं होने देता जबकि जिज्ञासा सफलता का पहला कदम है। रावण बुद्धि सम्पन्न होते हुए भी अहं के कारण बुराई का प्रतीक बन गया। स्वयं को सर्वशक्तिशाली समझना रावण के जीवन की बड़ी भूल थी। अहंकार धन-वैभव और वंश का नाश करता है, जिसके उदाहरण है-रावण, कौरव, कंस। जो सफलता के पहले चरण में ही अहंमन्यता के शिकार हो जाते है, वे सही अर्थों में सफलता को हासिल नहीं कर सकते।

"अध जल गगरी छलकत जाये", "थोथा चना बाजे घना", "नाम बड़े दर्शन छोटे" जैसी कहावते यही इशारा करती है। याद रखें - जीवन में अहंकार का पौधा उगने से पहले ही उखाड़ फैंकना, वरना कल वह तुम्हें उखाड़ फैंकेगा।

प्रेक्षा गतिविधि

॥प्रेक्षाध्यान॥

जीवन विज्ञान
स्वस्थ समाज की संरचना

10 दिवसीय आरोग्यम बाल शिविर का शानदार समापन।

नागपुर। स्थानीय तेरापंथ भवन में महाप्रज्ञ प्रेक्षा ध्यान केंद्र, नागपुर द्वारा आयोजित 10 दिवसीय बाल शिविर आरोग्यम का समापन समारोह का आयोजन किया गया। प्रेक्षा प्रशिक्षक आनंदमल सेठिया ने अभिभावकगण एवं आमन्त्रित अतिथियों की सन्निधि में तालियों के गड़गड़ाहट के बीच ध्वनि, मन्त्र ध्यान एवम विभिन्न प्रकार के आसनों के प्रयोग कराए।

एक ओर फैंसी ड्रेस प्रतियोगिता में बच्चों ने पानी व पेड़ बचाओ, बाल श्रम मुक्ति आदि सार्थक सन्देश युक्त प्रस्तुतियों के द्वारा मन्त्रमुग्ध किया तो दूसरी और देशभक्ति गीत, भजन आदि प्रस्तुत करते हुए वाह वाही लूटी। चित्र कला प्रतियोगिता में बच्चों ने पर्यावरण बचाओ से सम्बंधित अति सुंदर चित्र बनाए। कार्यक्रम के द्वितीय चरण में आरोग्य भारती के राष्ट्रीय कार्याध्यक्ष डॉ. रमेश गौतम, डॉ. मंजूषा वाठ एवं शीतल जैन द्वारा आयुर्वेदिक औषधि युक्त पौधों की प्रदर्शनी के माध्यम से उनके गुणधर्म बताएं तथा हमेशा निरोगी रहने के लिए औषधियुक्त पौधों का उपयोग किस तरह करना चाहिए विस्तारपूर्वक बताया। उपस्थित सभी जनों ने कार्यक्रम को सराहा और ऐसे ज्ञानवर्धक कार्यक्रम करते रहने की अपील की।

विशेष आमंत्रित संस्थाओं के पदाधिकारियों में कन्हैयालाल बाबेल, अमोलक सेठिया, सुनील छाजेड़, विकाश बुच्चा, राजेन्द्र पटावरी, झिंकारदेवी डागा, उषा गोलछा, अरुणा नखत आदि के अलावा डॉ. अनिता अगरकर की उपस्थिति मुख्य रूप से रही। प्रशिक्षक जतन मालू एवं प्रेमलता सेठिया ने विजेताओं को पुरस्कार व प्रोत्साहन पुरस्कार वितरित कराए। श्रद्धा झवेरी ने अति कुशलता पूर्वक कार्यक्रम का संचालन किया।

अंत मे प्रशिक्षक सेठिया ने बच्चों में जोश भरने वाले संकल्प मैं शक्तिशाली हूं, में स्वस्थ हूं, मैं सुंदर हूं, मैं प्रसन्न हूं, मैं भारतीय हूं आदि उच्चारण कराते हुए अगले वर्ष फिर से शिविर आयोजन के आश्वासन के साथ शिविर का समापन किया। उपस्थित सभी जनों ने शिविर की मुक्त कंठ से प्रशंसा की।

प्रेक्षा गतिविधि

अमृत वचन

* धर्म की आराधना और ध्यान करने वाले व्यक्ति में अंतर यह आता है कि वह घटना से प्रभावित नहीं होता। वह घटना को जान जाता है, पर संवेदन में नहीं बहता। जिसका ज्ञान जाग जाता है, उसका संवेदन सो जाता है। जिसमें ज्ञान सुप्त होता है, उसका संवेदन जाग जाता है। - आचार्य महाप्रज्ञ

जून - 2017

'प्रेक्षा एक प्रकार की लेजर मशीन है'

प्रेक्षावाहिनी का शुभारंभ

लूनकरनसर। शासन श्री साध्वीश्री पानकुमारीजी (द्वितीय) के सान्निध्य में प्रेक्षावाहिनी का शुभारंभ संभागियों को प्रेक्षाध्यान किट वितरित करके किया गया। जिसमें २१ सदस्य सम्भागी बने। महिला मंडल उपाध्यक्ष सुमन चौपड़ा को संवाहक नियुक्त किया गया। 'नैतिकता का शक्तिपीठ' आचार्य तुलसी शान्ति प्रतिष्ठान के अध्यक्ष व प्रेक्षाध्यान पत्रिका के सम्पादक जैन लूणकरण छाजेड़ व गंगाशहर तेरापंथ सभा के अध्यक्ष डॉ. पी.सी. तातेड़ मुख्य अतिथि थे। कन्यामण्डल द्वारा प्रेक्षाध्यान गीत के माध्यम से कार्यक्रम का मंगलाचरण किया गया। शासन श्री साध्वीश्री पान कुमारीजी (द्वितीय) ने सभी संभागियों को प्रेक्षाध्यान की उपसम्पदा स्वीकार करवाई व साध्वीश्री मंगलयशाजी ने मंगल भावना का अभ्यास करवाया। साध्वीश्री डॉ. अक्षयप्रभाजी ने कहा-प्रेक्षा एक ऐसा दृष्टिकोण है जो शांत, सुखी जीवन जीने के लिए सकारात्मक ऊर्जा पैदा करता है। प्रेक्षा एक प्रकार की लेजर मशीन है जो आपके जीवन में कितने भी उतार-चढ़ाव आये हर परिस्थिति को हैंडल करने में सहायता करता है। गुस्से को कंट्रोल करने के लिए ज्योति केंद्र पर सफेद रंग का ध्यान करना चाहिए। नकारात्मकता को दूर करने के लिए दीर्घश्वास प्रेक्षा का प्रयोग करना चाहिए।

गंगाशहर तेरापंथ सभा अध्यक्ष पी.सी. तातेड़ ने प्रेक्षा का अर्थ बताते हुए आचार्यश्री तुलसी की हर मासिक पुण्यतिथि पर 'नैतिकता का शक्तिपीठ' गंगाशहर आकर दर्शन करने व माला फेरने की बात कही। उन्होंने वार्षिक पुण्यतिथि हेतु लूनकरनसरवासियों को आमंत्रित किया।

जैन लूणकरण छाजेड़ ने प्रेक्षाध्यान व उससे होने वाले फायदों तथा इस सम्बन्ध में की गई रिसर्च तथा प्रेक्षा एप के बारे में बताया, तथा आचार्यश्री महाप्रज्ञजी के साहित्य की उपयोगिता बतायी। छाजेड़ ने कहा कि शारीरिक तनाव दूर करने तथा मानसिक व भावात्मक स्वास्थ्य के लिए प्रेक्षाध्यान उपयोगी है। उन्होंने कहा कि व्यक्ति अपनी बुरी आदतों को छोड़ना चाहे तथा अपने व्यक्तित्व का विकास करना चाहे तो नियमित प्रेक्षाध्यान करें। छाजेड़ ने कहा कि जो लोग अपना अच्छा कॅरियर बनाना चाहते है तथा इच्छाशक्ति को मजबूत करना चाहते हैं वो प्रेक्षाध्यान को अपनी जीवन शैली मे जोड़ें। आचार्यश्री तुलसी की वार्षिक पुण्यतिथि पर 'नैतिकता का शक्तिपीठ' पर गंगाशहर में आयोजित होने वाले कार्यक्रमों से अवगत करवाया। स्थानीय तेरापंथ सभा के अध्यक्ष भीखमचन्द बाफना और मंत्री विमल दुगड़ के द्वारा डॉ. पी.सी. तातेड़ को साहित्य भेंट कर सम्मानित किया गया। कार्यक्रम का संचालन श्रीकांत डागा द्वारा किया गया।

प्रेक्षावाहिनी की कार्यशाला का हुआ आयोजन

केसिंगा। केसिंगा महावीर जैन भवन में मुनिश्री अर्हतकुमारजी ठाणा २ के सान्निध्य में आज दिनांक १७ अप्रैल २०१७ को प्रेक्षावाहिनी की कार्यशाला का आयोजन किया गया। मुनिश्री अर्हतकुमारजी ने प्रेक्षाध्यान के बारे में विस्तार से जानकारी देते हुए प्रतिदिन इसका ध्यान करने कि प्रेरणा दी। मुनिश्री ने बताया कि ध्यान से जीवन का कल्याण होता है। सहयोगी मुनिश्री भरतकुमारजी ने सभी को प्रेक्षाध्यान के प्रयोग करवाए। केन्द्र द्वारा भेजी गयी किट केसिन्गा प्रेक्षावाहिनी सम्वाहक अंकिता ने सभी को वितरित किया।

॥प्रेक्षाध्यान॥

निशुल्क प्रेक्षा ध्यान शिविर - मुद्रा विज्ञान एवं रंग चिकित्सा कार्यक्रम आयोजित

तिरुप्पुर तेरापंथ भवन में तेरापंथ युवक परिषद के तत्वावधान में निशुल्क प्रेक्षा ध्यान शिविर - मुद्रा विज्ञान एवं रंग चिकित्सा का कार्यक्रम मुनिश्री ज्ञानेंद्र कुमार जी स्वामी एवं मुनिश्री प्रशांत कुमार जी स्वामी ठाणा ५ के सानिध्य में आयोजित किया गया। प्रेक्षा पुरस्कार, महाराष्ट्र रत्न एवं योग शिरोमणि से पुरस्कृत मुम्बई के सुप्रसिद्ध वरिष्ठ प्रेक्षाध्यान प्रशिक्षक पारसमल दुग्गड़ प्रशिक्षण देने तिरुप्पुर आये। कार्यक्रम प्रातः ६.४५ से लेकर रात्रि १० बजे तक अलग अलग चरणों में चला। शिविर का शुभारंभ ते.म.म द्वारा मंगलाचरण के संगान से हुआ। तेयुप उपाध्यक्ष एवं जेटीएन प्रतिनिधि चेतन बरड़िया ने वहां उपस्थित सभी का स्वागत किया। प्रथम चरण में

योगाभ्यास करवाया गया। दूसरे चरण में शिविरार्थियों को ध्यान करवाया गया। इस चरण में मुनिश्री ज्ञानेंद्र स्वामी एवं मुनिश्री प्रशांत कुमार जी ठाणा ५ ने पावन सान्निध्य प्रदान किया। मुनिश्री ज्ञानेंद्र कुमार ने फरमाया की पारसमल दुग्गड़ पर आचार्यप्रवर की दृष्टि हमेशा से बनी रही है। पारसमल एवं उनकी धर्मपत्नी दोनों ही उपासक भी हैं और साथ ही प्रेक्षाध्यान प्रशिक्षक भी हैं। उनके परिवार के सभी सदस्य प्रशिक्षक हैं। पारसमल द्वारा करवाये जाने वाले योगाभ्यास से लाखों लोगों को फायदा प्राप्त हुआ है। उनके १५ लाख से भी ज्यादा यूट्यूब वीवर्स हैं।

पारसमल दुग्गड़ के वीडियोस यूटयूब पर उपलब्ध हैं, तो सब इस चैनल से सब्सक्राइब करके अपने रोगों का निवारण कर सकते हैं। मुनिश्री प्रशांत कुमार ने प्रेक्षा ध्यान की विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए कहा कि यह आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी की अदभुत देन हैं मानवता के प्रति। आज हमारा खान पान, रहने के तौर तरीके सब बदल रहे हैं, पर फिर भी हम अपने शरीर पर ध्यान नही देते। प्रेक्षा ध्यान के माध्यम से हम न केवल अपने शरीर को स्वस्थ रख सकते हैं, बल्कि दृढ़ संकल्प के साथ प्रशिक्षक बनकर लाखों लोगों की सेवा कर सकते हैं। यह हमारे लिए चिंतन का विषय है कि हमारे अपने समाज के लोग इस अदभुत देन के लाभ से वंचित हैं ।मुनिश्री कुमुद कुमार जी, मुनिश्री विमलेश कुमार जी एवं मुनिश्री सुबोध कुमार जी ने उपस्थित शिविरार्थियों को संबोधित किया। ध्यान में श्वास के ऊपर विशेष जोर दिया गया। इसी के साथ श्री पारसमल जी ने रंग चिकित्सा एवं मुद्रा विज्ञान के ऊपर प्रकाश डाला। तीसरे चरण में २५ मिनट का कायोत्सर्ग करवाया गया। चौथे चरण में श्वास प्रेक्षा करवाया गया। श्री पारसमल जी दुग्गड़ ने श्वास प्रेक्षा की विशेषताओं के बारे में बताया । श्वास ही एक ऐसी चीज है जिससे हम भीतर की दुनिया में प्रवेश कर सकते हैं। पांचवे चरण में अनुप्रेक्षा करवाया गया।

छटे चरण में योगिक क्रिया एवं आसन प्राणायाम के ऊपर विशेष प्रकाश डाला गया। सातवें चरण में गमनयोग करवाया गया। गमनयोग में एक विशेष मौन रैली आयोजित की गई जिसके उद्देश्य था कि हम प्रेक्षा ध्यान के प्रति एक जागरूकता पैदा करें। इसी के साथ शिविरार्थियों को कैसे चलें के विषय पर सिखाया गया। गमनयोग करते हुए सब श्री संपत जी तातेड़ के निवास पर पधारे। वहां सबके साथ परिचय किया गया।

रात्रि कालीन सत्र में मुनिश्री के सान्निध्य में एक विशेष कार्यक्रम आयोजित किया गया जिसका नाम था जनता की अदालत में प्रेक्षाध्यान द्वारा रोगों का निवारण । श्री पारसमल जी दुग्गड़ जज बने, श्री चेतन बरड़िया वकील बने एवं श्री जितेंदर जी भंसाली कोर्टरूम क्लर्क बने। नाटक के रूप में उपस्थित शिविरार्थियों के रोगों का समाधान किया गया । इस सत्र को विशेष रूप से आयोजित करने के लिए मुनिश्री ज्ञानेंद्र कुमार जी ने प्रेरणा दी। प्रेक्षाध्यान शिविर में कुल ५५ शिविरार्थियों ने भाग लिया, इसमे ज्ञानशाला के बच्चे, युवक, पुरुष, महिला एवं वृद्ध श्रावक श्राविका उपस्थित थे। श्री चेतन बरड़िया ने आभार ज्ञापन किया एवं शिविर के संयोजक भी रहे।

प्रेक्षाध्यान शिविर में भाग लेने वाले शिविरार्थियों से अनुरोध है कि आप अपने अनुभव हमें प्रकाशन हेतु भेजें। -सम्पादक

प्रेक्षावाहिनी
एक परिचय

प्रेक्षाध्यान के द्वारा आध्यात्मिक एवं आनंदमय जीवन जीने में रुचि रखने वाले व्यक्तियों के समूह का नाम है– 'प्रेक्षावाहिनी'। इसमें सम्मिलित सभी व्यक्ति प्रेक्षाध्यान के साधक होते हैं। प्रेक्षाध्यान में रुचि रखने वाले साधकों में परस्पर संपर्क एवं संवाद बना रहे, इस दृष्टि से देश के विभिन्न क्षेत्रों में प्रेक्षावाहिनियां गठित की जा रही हैं। कम से कम दस साधक मिलकर किसी स्थान पर प्रेक्षावाहिनी गठित कर सकते हैं। गठित प्रेक्षावाहिनी द्वारा प्रत्येक माह के प्रथम रविवार को प्रेक्षाध्यान की एक घंटे की ध्यान-गोष्ठी आयोजित की जाती है, जिसमें सामूहिक रूप से प्रेक्षाध्यान का अभ्यास व प्रयोग किये जाते हैं।

लक्ष्य

प्रेक्षाप्रणेता आचार्य महाप्रज्ञ द्वारा प्रणीत प्रेक्षाध्यान को आचार्य महाश्रमण के निर्देशन में जन–जन तक प्रसारित कर शांति व अध्यात्म का वातावरण निर्मित करने का प्रयास करना।

उद्देश्य

1. व्यक्ति का आध्यात्मिक विकास करना।
2. प्रेक्षाध्यान का संगठन सुदृढ़ करना।
3. ऐसे प्रशिक्षित एवं समर्पित मंच का निर्माण करना जो प्रेक्षाध्यान के प्रसार में उपयोगी बन सके।

निर्देशक मण्डल

प्रेक्षा फाउण्डेशन द्वारा मनोनीत निर्देशक मण्डल द्वारा प्रेक्षावाहिनी का संचालन किया जाएगा। निर्देशक मण्डल का दायित्व होगा कि :

1. प्रतिवर्ष जनवरी माह में प्रत्येक शाखा के लिए एक संवाहक का चयन करना।
2. प्रत्येक शाखा को केन्द्रीय निर्देश और प्रेक्षा फाउण्डेशन के संवादों से अवगत कराना।
3. प्रत्येक शाखा को प्रेक्षावाहिनी के सम्यक् संचालन के लिए प्रेरित करना तथा कार्य की अवगति लेना।

संवाहक

दायित्व

1. अपने क्षेत्र में प्रेक्षावाहिनी का सम्यक् संचालन करना।
2. अपने क्षेत्र में प्रेक्षाध्यान की कार्यशाला, शिविर आदि का आयोजन करना।
3. प्रतिमाह प्रेक्षाध्यान की ध्यान गोष्ठी का आयोजन करना।
4. प्रेक्षावाहिनी के सदस्यों की अभिवृद्धि के लिए प्रयत्नशील रहना।
5. प्रत्येक दस सदस्यों के समूह में एक सह-संवाहक का चयन करना।
6. प्रत्येक सह-संवाहक तक संवाद प्रेषित करना।
7. प्रत्येक सह-संवाहक को प्रेक्षावाहिनी के कार्य के लिए प्रेरित करना तथा अवगति लेना।
8. निर्देशक मण्डल द्वारा प्रदत्त कार्यों को क्रियान्वित करना।

सह-संवाहक

दायित्व

1. प्रेक्षावाहिनी के संचालन में संवाहक का सहयोग करना।
2. प्रेक्षावाहिनी के सदस्यों की अभिवृद्धि में प्रयत्नशील रहना।
3. अपने समूह के सदस्यों तक संवाद प्रेषित करना।
4. प्रेक्षाध्यान की ध्यान गोष्ठी में अपने समूह के सदस्यों की उपस्थिति सुनिश्चित करना।
5. संवाहक द्वारा प्रदत्त कार्यों को क्रियान्वित करना।

सदस्य

अर्हता

1. जो प्रेक्षाध्यान में रूचि रखता है।
2. जो आध्यात्मिक बनना चाहता है।
3. जो सोलह वर्ष से अधिक अवस्था का है।

सदस्यता

1. प्रेक्षावाहिनी के किसी सदस्य द्वारा अनुमोदित व्यक्ति ही प्रेक्षावाहिनी का सदस्य बन सकेगा।
2. सदस्यता सहयोग राशि रु. 100/- प्रति व्यक्ति रहेगी, जिसकी प्राप्ति के बाद प्रेक्षा फाउण्डेशन द्वारा किट प्रेषित की जाएगी।
3. प्रत्येक सदस्य का निश्चित सदस्यता क्रमांक रहेगा।

दायित्व

1. प्रतिमाह प्रेक्षाध्यान की ध्यान-गोष्ठी तथा प्रेक्षावाहिनी के कार्यक्रमों में उपस्थित रहना।
2. प्रेक्षाध्यान के प्रसार के लिए प्रयासरत रहना।
3. प्रेक्षावाहिनी की सदस्यता की अभिवृद्धि के लिए प्रयत्नशील रहना।
4. यथासंभव प्रतिदिन कुछ समय प्रेक्षाध्यान का अभ्यास करना।
5. अपेक्षानुसार संवाहक/सह-संवाहक का सहयोग करना।

ध्यान गोष्ठी

सामान्यतः प्रत्येक माह के प्रथम रविवार को 1 घंटा प्रेक्षावाहिनी ध्यान गोष्ठी आयोजित होगी। ध्यान गोष्ठी का क्रम निम्न प्रकार रहेगा–

1. प्रेक्षा गीत 2. मंगल भावना 3. प्रेक्षा प्रवचन
4. प्रेक्षाध्यान 5 सूचना 6. सामूहिक उपस्थिति

- प्रेक्षावाहिनी का बैनर सभी कार्यक्रमों में अनिवार्य रूप से लगेगा।
- प्रेक्षावाहिनी की वेशभूषा सामान्यतः सफेद पोशाक रहेगी एवं सभी सदस्य निर्धारित बेज लगाकर ही उपस्थित होंगे।

अंक प्रणाली

सभी सदस्यों के मूल्यांकन के लिए एक अंक प्रणाली रहेगी। वर्ष में सर्वाधिक अंक प्राप्तकर्त्ता को सम्मानित किया जाएगा।

अंक निर्धारण

ध्यान गोष्ठी में उपस्थिति 100 अंक,
ध्यान गोष्ठी में अनुपस्थिति (-)100 अंक
नये सदस्य को जोड़ने पर 100 बोनस अंक

अपने क्षेत्र में प्रेक्षावाहिनी प्रारम्भ करने के लिए सम्पर्क करें : 09414134340, 08527094064

सम्पर्क सूत्र : **प्रेक्षा फाउण्डेशन**

जैन विश्व भारती, लाडनूं–341306 (राजस्थान) 01581–226119, 082333 44482 foundation@preksha.com / www.preksha.com

Date of Publication : 05.06.2017
Date of Posting : 05/07-06-2017
डाक पंजीयन संख्याः नागौर/ 016/15–17
भारत सरकार पंजीयन संख्या : 35209/80
If undelivered please return to : Jain Vishva Bharati, Ladnun - 341306, Dist. Nagaur (Raj.) Ph. : 01581-226080

Shed the 'I', Renounce the 'Mine', Everything will be your, Forever.
-Acharya Mahapragya

With best compliments from :
Ratanlal Basant Kumar Parakh (Churu) Kolkata

ORBIT GROUP
... Building Relationships

The Orbit, 1 Garstin Place, Kolkata-700 001 Ph: 4011 9050 (20 lines)
Fax: 2210 1256 email: info@orbitgroup.net | www.orbitgroup.net

Orbit Residences. The key to high living.

प्रकाशक-मुद्रक : श्री राजेश कोठारी द्वारा तुलसी अध्यात्म नीडम्, जैन विश्व भारती, लाडनूं के लिए प्रकाशित तथा जायन आई. एन. सी. कॉर्पोरेशन, नई दिल्ली में मुद्रित।
संपादक - जैन लूणकरण छाजेड